ગુજરાત રાજ્યના શિક્ષણ વિભાગના પત્ર ક્રમાંક
મશબ/1116/1052-54/છ તા.28-11-2016થી મંજૂર

हिन्दी

(प्रथम भाषा)

कक्षा 12

प्रतिज्ञापत्र

भारत मेरा देश है ।
सभी भारतवासी मेरे भाई-बहन हैं।
मुझे अपने देश से प्यार है और इसकी समृद्धि तथा बहुविध
परंपरा पर गर्व है।
मैं हमेशा इसके योग्य बनने का प्रयत्न करता रहूँगा।
मैं अपने माता-पिता, अध्यापकों और सभी बड़ों की इज्जत करूँगा-
एवं हरएक से नम्रतापूर्वक व्यवहार करूँगा।
मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि देश और देशवासियों के प्रति एकनिष्ठ रहूँगा।
उनकी भलाई और समृद्धि में ही मेरा सुख निहित है।

मूल्य: ₹ 62.00

तमसो मा ज्योतिर्गमय
गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल
'विद्यायन' , सेकटर 10-ए, गांधीनगर-382 010

© गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, गांधीनगर

इस पाठ्यपुस्तक के सभी अधिकार गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल के अधीन है। इस पाठ्यपुस्तक का कोई भी अंश किसी भी रूप में गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल के नियामक की लिखित अनुमति के बिना प्रकाशित नहीं किया जा सकता।

विषय परामर्शन

डॉ. दयाशंकर त्रिपाठी

लेखन-संपादन

डॉ. ओमप्रकाश गुप्ता (कन्वीनर)

श्री राजेशसिंह क्षत्रिय

डॉ. कोकिलाबहन पारेख

डॉ. नंदिता शुक्ला

समीक्षा

डॉ. कान्तिलाल परमार

डॉ. नयना डेलीवाला

डॉ. गीतादेवी सिंह कुरील

डॉ. गीताबहन जगड़

संयोजन

डॉ. कमलेश एन. परमार

(विषय-संयोजक : हिन्दी)

निर्माण-संयोजन

श्री आशिष एच. बोरीसागर

(नायब नियामक : शैक्षणिक)

मुद्रण-आयोजन

श्री हरेश एस. लीम्बाचीया

(नायब नियामक : उत्पादन)

प्रस्तावना

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा तैयार किए गए नये राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के अनुसंधान में गुजरात माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षण बोर्ड द्वारा नया पाठ्यक्रम तैयार किया गया है, जिसे गुजरात सरकार ने स्वीकृति दी है।

नये राष्ट्रीय अभ्यासक्रम के परिपेक्ष में तैयार किए गए विभिन्न विषयों के नये अभ्यासक्रम के अनुसार तैयार की गई **कक्षा 12 हिन्दी (प्रथम भाषा)** की यह पाठ्यपुस्तक विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मंडल हर्ष का अनुभव कर रहा है। नई पाठ्यपुस्तक के निर्माण प्रक्रिया में संपादकीय पेनल ने विशेष ख्याल रख कर हस्तप्रत तैयार की है। एन.सी.ई.आर.टी. एवं अन्य राज्यों के अभ्यासक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को देखते हुए गुजरात के नये पाठ्यपुस्तक को गुणवत्तालक्षी कैसे बनाया जाय, इस पर संपादकीय पेनल ने सराहनीय प्रयत्न किया है।

इस पाठ्यपुस्तक को प्रकाशित करने से पहले इसी विषय के निष्णातों तथा इस स्तर पर अध्यापनरत अध्यापकों की ओर से सर्वांगीण समीक्षा की गई है। समीक्षा शिविर में मिले सुझावों को इस पाठ्यपुस्तक में शामिल किया गया है। पाठ्यपुस्तक की मंजूरी क्रमांक प्राप्त करने की प्रकिया के दौरान गुजरात माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षण बोर्ड के द्वारा प्राप्त हुए सुझावों के अनुसार इस पाठ्यपुस्तक में आवश्यक संशोधन-परिवर्धन करके प्रकाशित किया गया है।

नये अभ्यासक्रम का एक उद्देश्य है, इस स्तर के छात्र व्यावहारिक भाषा का उपयोग करने के साथ-साथ अपनी भाषा अभिव्यक्ति को विशेष असरकारक बनाएँ। साहित्यिक स्वरूप एवं सर्जनात्मक भाषा के परिचय के साथ-साथ हिन्दी भाषा की खूबियों को समझकर अपने स्व-लेखन में प्रयोग करना सीखें, इसलिए भाषा-अभिव्यक्ति एवं लेखन के लिए छात्रों को पूर्ण अवकाश दिया गया है।

इस पाठ्यपुस्तक को रुचिकर, उपयोगी एवं क्षतिरहित बनाने का पूरा प्रयास मंडल द्वारा किया गया है, फिर भी पुस्तक की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शिक्षा में रुचि रखनेवालों से प्राप्त सुझावों का मंडल स्वागत करता है।

डॉ. एम. आई. जोषी	**डॉ. नीतिन पेथाणी**
नियामक	कार्यवाहक प्रमुख
दिनांक. : 17-01-2018	गांधीनगर

प्रथम संस्करण : 2017, **पुनः मुद्रण :** 2018

प्रकाशक : गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, 'विद्यायन', सेक्टर 10-ए, गांधीनगर की ओर से डॉ. एम. आई. जोषी, नियामक

मुद्रक :

मूलभूत कर्तव्य

भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह* –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करनेवाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आवाहन किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो; ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरन्तर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू ले;

(ट) माता-पिता या संरक्षक, छः से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने बालक या प्रतिपाल्य को यथास्थिति शिक्षा का अवसर प्रदान करे।

---

* भारत का संविधान : अनुच्छेद 51-क

अनुक्रमणिका

पद्य विभाग

1.	दोहे और पद	कबीर	1
2.	वनपथ पर	तुलसीदास	3
3.	दोहे	दयाराम	6
4.	कवित्त और सवैया	पद्‌माकर	8
5.	मुफ़लिसी	नज़ीर अकबराबादी	10
6.	श्रद्धा का उद्‌बोधन	जयशंकर प्रसाद	13
7.	जाग तुझको दूर जाना	महादेवी वर्मा	17
8.	उनको प्रणाम !	नागार्जुन	20
9.	सतपुड़ा के जंगल	भवानी प्रसाद मिश्र	23
10.	रोटी	केदारनाथ सिंह	28
11.	जाने कैसी हवा चली अब के अपने गाँव में	भगवानदास जैन	31
12.	पहाड़ पर लालटेन	मंगलेश डबराल	33
13.	बोलना	अरुण कमल	36
14.	आदमी को लीलती हैं खानें	मदन कश्यप	38
15.	फ़र्क	नीलेश रघुवंशी	42

गद्य विभाग

1.	पूस की रात	(कहानी)	प्रेमचंद	44
2.	नाखून क्यों बढ़ते हैं ?	(निबंध)	पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी	50
3.	मातृभूमि का मान	(एकांकी)	हरिकृष्ण ‘प्रेमी’	55
4.	मकदूम बख्श	(संस्मरण)	सेठ गोविन्द दास	61
5.	पत्नी	(कहानी)	जैनेन्द्र कुमार	64
6.	राजस्थान के एक गाँव की तीर्थयात्रा	(यात्रा-वर्णन)	भीष्म साहनी	69
7.	स्त्री-शिक्षा	(निबंध)	नर्मद	75
8.	महाशूद्र	(कहानी)	मोहनदास नैमिशराय	80
9.	इंटेलेक्चुअल्स पार्लर	(व्यंग्य)	भगवती प्रसाद द्विवेदी	86
10.	पर्यावरण और सनातन-दृष्टि	(पर्यावरण लेख)	छगन मोहता	90
11.	अग्निपथ	(कहानी)	मालती जोशी	94
12.	योग्यता और व्यवसाय का चुनाव	(निबंध)	माधव राव सप्रे	101
13.	कमलादेवी चट्टोपाध्याय	(जीवनी)	(संकलित)	105
14.	काला पहाड़	(उपन्यास-अंश)	भगवानदास मोरवाल	110
15.	मुर्दहिया	(आत्मकथा-अंश)	तुलसीराम	119
●	जनसंचार माध्यम : परिचय			126
●	हिन्दी साहित्य का इतिहास			140

पूरक वाचन

1.	सुदामाचरित	(कविता)	नरोत्तमदास	168
2.	कर्मफल	(कहानी)	यशपाल	170
3.	कहाँ से आए छूत-अछूत	(कविता)	सूरजपाल चौहान	173
4.	कृष्ण विवर	(विज्ञान-लेख)	डॉ. जयंत नारलीकर	175

●

1 दोहे और पद

कबीर

(जन्म : सन् 1398 ई ; निधन : सन् 1518 ई.)

भक्तिकाल की निर्गुण मार्गी संत-परंपरा के प्रवर्तक संत कवि कबीर का जीवनवृत प्रामाणिक रूप से प्राप्त नहीं है। अधिकांश विद्वान काशी के लहरतारा नामक स्थान को इनका जन्मस्थल मानते हैं। उनके जन्म और माता-पिता को लेकर बहुत विवाद है। परन्तु इस बात में कोई विवाद नहीं है कि कबीर जुलाहा थे, क्योंकि उन्होंने अपनी कविता में स्वयं को कई बार जुलाहा कहा है। तत्कालीन भेदभावपूर्ण समाज-व्यवस्था के कारण कबीर विधिवत् शिक्षा नहीं पा सके किंतु बहुश्रुत होने के कारण उन्हें अथाह ज्ञान प्राप्त था। जनश्रुतियों के आधार पर स्वामी रामानंद को उनका मंत्रगुरु माना जाता है। प्रेम का ढाई अक्षर पढ़कर वे पंडित हो गए थे। उनकी आत्मा में सच्चाई और वाणी में विश्वास था। यही कारण है कि उनकी कविता सीधे ह्रदय को छूती है। कबीर के राम दशरथ-पुत्र राम न होकर निर्गुण-निराकार राम हैं।

कबीर ने एक ओर धार्मिक बाह्याडंबरों और सामाजिक रूढ़ियों पर तीखी चोट की है तो दूसरी ओर आत्मा-परमात्मा के विरह-मिलन के मार्मिक गीत गाये हैं। उनके ह्रदय में गहरा मानवीय प्रेम और करुणा है। उनकी भाषा साधारण बोलचाल की भाषा है जो 'सधुक्कड़ी' कहलाती है। उन्होंने साखी, सबद, रमैनी और उलटबासियाँ लिखी हैं। 'रमैनी' और 'सबद' में गेय पद हैं। उनकी कविता में बुनकर - व्यवसाय से जुड़े शब्दों का रचनात्मक प्रयोग हुआ है। कबीर-वाणी का संग्रह 'बीजक' कहलाता है।

संकलित पाँच दोहों में से **पहले** दोहे में मन को वश में करके ही सारी सिद्धियाँ पाई जा सकती हैं, इस तथ्य की अभिव्यक्ति है। **दूसरे** दोहे में माला फेरने के बदले मन को ईश्वर की ओर केन्द्रित करने को कहा गया है। **तीसरे** दोहे में कहा गया है कि यदि कर्म ऊँचे नहीं हैं तो ऊँचे कुल में जन्म लेने का कोई मतलब नहीं है। **चौथे** दोहे में संत की उस महानता का वर्णन है जो पेट में समाए उतना ही ग्रहण करता है, बाकी सब बाँट देता है। **पाँचवें** दोहे में कहा गया है कि बुरे कर्मों का सदा बुरा फल मिलता है।

संकलित पद में आत्मा में ही परमात्मा के होने का रहस्य उद्‌घाटित करते हुए ईश्वर रूपी प्रियतम को पाने के लिए अज्ञान के परदे को दूर करने को कहते हैं। धन-यौवन का अहंकार त्याग एकाग्र चित्त होकर ज्ञान का दीपक जलाने से ही परमात्मा के मिलन से उत्पन्न अनहद आनंद की अनुभूति हो सकती है।

दोहे

तन कौं जोगी सब करैं, मन कौं बिरला कोइ।
सब सिधि सहजै पाइये, जे मन जोगी होइ ॥ 1 ॥

कबीर माला काठ की, कहि समझावै तोहि।
मन न फिरावै आपनौ, कहा फिरावै मोहि ॥ 2 ॥

ऊँचै कुल क्या जनमियाँ, जे करणी ऊँच न होइ।
सोवन कलस सुरे भर्‌या, साधू निंद्या सोइ ॥ 3 ॥

संत न बांधै गांठड़ी, पेटि समाता लेइ।
सांईं सूं सनमुख रहै, जहाँ मागै तहां देइ ॥ 4 ॥

करता था तौ क्यों रह्या, अब करि क्यूँ पछताइ।
बोवै पेड़ बबूल का, अंब कहाँ तै खाइ ॥ 5 ॥

पद

घूँघट का पट खोल रे, तोको पीव मिलेंगे।
घट-घट में वह सांई रमता, कटुक वचन मत बोल रे॥
धन जोबन का गरब न कीजै, झूठा पचरंग चोल रे।
सुन्न महल में दियना बारिले, आसन सों मत डोल रे॥
जोग जुगुत सों रंगमहल में, पिय पायो अनमोल रे।
कह कबीर आनंद भयो, बाजत अनहद ढोल रे॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

बिरला कोई-कोई **सिधि** सिद्धि **काठ** काष्ठ **कहि** कहकर **तोहि** तुझे **फिरावै** फेरना, फेरने का काम करना **करणी** करनी, कर्म **सोवन** स्वर्ण **सुरे** मदिरा, शराब **निंद्या** निंदा **गांठडी** गठरी **पेटि** पेट **सनमुख** सामने **अंब** आम **पीव** प्रियतम **पट** पर्दा **घट** हृदय **चोल** शरीर रूपी वस्त्र **पचरंग** पाँच तत्त्वों वाला **दियना** दीपक **आसन** आशा **जोग** योग-साधना **जुगुत** युक्ति **अनहद** असीमित नाद (योग-साधना के समय आत्मा को जब परमात्मा की प्राप्ति होती है, तब मस्तिष्क में जो योग नाद होता है, उसे अनहद ढोल कहते हैं।)

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) सारी सिद्धियाँ कैसे प्राप्त की जा सकती हैं ?

(2) काठ की माला के माध्यम से कबीर क्या समझाते हैं ?

(3) कर्म के विषय में कबीर क्या कहते हैं ?

(4) संत गठरी क्यों नहीं बाँधता है ?

(5) कटु वचन क्यों नहीं बोलना चाहिए ?

(6) अनमोल प्रियतम कहाँ और कैसे प्राप्त होता है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'घूँघट का पट खोल रे' पद का भावार्थ स्पष्ट करते हुए उसमें निहित आध्यात्मिक संदेश को समझाकर लिखिए।

(2) 'बोवै पेड़ बबूल का, अंब कहाँ तै खाइ।' पंक्ति का विचार-विस्तार कीजिए।

(3) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

'धन जोबन का गरब न कीजै, झूठा पचरंग चोल रे।
सुन्न महल में दियना बारिले, आसन सों मत डोल रे॥'

योग्यता-विस्तार

- 'लागा चुनरी में दाग' पद ढूँढ़कर पढ़िए।
- सन् 1950 में बनी 'जोगन' फिल्म में 'घूँघट का पट खोल रे' को गीत के रूप में फिल्माया गया है, इंटरनेट के माध्यम से उसे ढूँढ़कर देखिए।

•

2 वनपथ पर

तुलसीदास

(जन्म : सन् 1532 ई ; निधन : सन् 1623 ई.)

भक्तिकाल की सगुण काव्यधारा की रामभक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोस्वामी तुलसीदास का जन्म उत्तर प्रदेश के बाँदा जिले के राजापुर गाव में हुआ था। इनकी माता का नाम हुलसी तथा पिता का नाम आत्माराम बताया जाता है। बचपन में ही माता-पिता का निधन हो गया था। अत: उन्हें भीषण दरिद्रता और दीनता से संघर्ष करना पड़ा। अपने गुरु बाबा **नरहरि दास** से उन्होंने संस्कृत काव्य एवं शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। कहा जाता है कि आरंभिक दिनों में तुलसी अपनी पत्नी रत्नावली के प्रति अत्यंत आसक्त थे किंतु बाद में पत्नी द्वारा ही प्रताड़ित होने पर संसार से विरक्त हो रामभक्ति की ओर उन्मुख हुए। 'रामचरित मानस' कवि की अनन्य भक्ति भावना और सृजनात्मकता का सर्वोच्च शिखर है।

तुलसी मानवतावादी होने के साथ-साथ समन्वयवादी भी थे। अपनी उदारमता चित्रवृत्ति के कारण उन्होंने सभी क्षेत्रों में समन्वय की सफल चेष्टा की। प्रबंध और मुक्तक दोनों काव्य रूपों, अवधी और ब्रज दोनों भाषाओं पर उनका समान अधिकार था। सगुण के साथ-साथ निर्गुण के प्रति भी वे उदार थे। लोकमंगल की उदात्त भावना से अनुप्रणित उनकी चेतना 'रावणत्त्व' पर 'रामत्त्व' की विजय का संदेश देती है। तुलसी का स्पर्श पाकर कविता सचमुच धन्य हो गई। 'रामचरित मानस' जैसे उत्तम महाकाव्य के अतिरिक्त 'कवितावली', 'गीतावली', 'दोहावली', 'कृष्णगीतावली', 'विनय पत्रिका' तथा 'बरवै रामायण' आदि उनकी प्रमुख काव्य-रचनाएँ हैं।

संकलित छंद 'कवितावली' के अयोध्याकांड से लिए गए हैं, जिनमें राम के वन-गमन संबंधी प्रसंगों का वर्णन है। **पहले** छंद में कोमलांगी सीता की विडंबना का अनुभावों द्वारा चित्रण हुआ है। हठाग्रह कर वन को जाने वाली सीता कुछ कदम चलने पर ही थक जाती हैं, कुछ कह नहीं पातीं, राम सबकुछ समझ जाते हैं और प्रिया की व्याकुलता देख आँखों से आँसू बह निकलते हैं। मनोभावों का मनोहारी चित्र इसमें अंकित है। **दूसरे** छंद में वनमार्ग में ग्राम वधुएँ वनवास दिए जाने को लेकर अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करती हैं। **तीसरे** में ग्राम वधुएँ राम की आकर्षक छवि से अभिभूत हो सीता से पूछती हैं कि साँवरे से दिखने वाले आपके क्या लगते हैं ? **चौथे** छंद में सीता चतुर ग्राम वधुओं के प्रश्न का अंग-भंगिमा द्वारा उत्तर देकर स्त्री-सहज चातुर्य का परिचय देती हैं।

पुरतें निकसीं रघुबीर-बधू, धरि धीर दए मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भालकनी जल की, पुटि सूख गए मधुराधर वै॥
फिरि बूझति हैं 'चलनो अब केतिक' पर्नकुटी करिहो कित ह्वै।
तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीं चल च्वै **॥ 1॥**

रानी मैं जानी अजानी महा पवि पाहन हूँ ते कठोर हियो है।
राज हु काज अकाज न जान्यो, कह्यो तिय तो जिन कान कियो है॥
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है ?
आँखिन में, सखि ! राखिबे जोग, इन्हें किमि कै बनवास दियो है **॥ 2॥**

सीस जटा, उर बाहु बिसाल, बिलोचन लाल, तिरीछी सी भौंहैं।
तून सरासन बान धरे, 'तुलसी' बन मारग में सुठि सोहैं॥
सादर बारहिं बार सुभाव, चितै तुम त्यौं हमरो मन मोहैं।
पूछति ग्रामबधू सिय सों "कहौ साँवरे से, सखि रावरे को हैं ?" **॥ 3॥**

सुनि सुन्दर बैन सुधारस-साने सयानी हैं जानकी जानी भली।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली॥
तुलसी तेहि औसर मोहैं सबै अवलोकति लोचन-लाहु अली।
अनुराग-तड़ाग में भानु उदै, बिगसीं मनो मंजुल कंज-कली **॥ 4॥**

शब्दार्थ-टिप्पणी

पुर तें नगर से (श्रृंगवेर पुर से) **धरि** धारण करके, रख करके **धीर** धैर्य **दए** रखना **मग** मार्ग **डग** कदम **भरिभाल** पूरे मस्तक पर **जल की कनी** पसीने की बूँदें **वै** दोनों **पुटि** होंठ **केतिक** कितनी (दूर) **कित ह्वै** कहाँ पर **तिय** पत्नी **चारु** सुंदर **च्वै चलीं** बहने लगीं (अश्रुपात) **अजानी** अज्ञानी, नासमझ **पवि** वज्र **पाहन** पाषाण, पत्थर **काज अकाज** भला-बुरा **कान कियो है** सही मान लिया है **प्रीतम** स्नेही जन **जोग** योग्य **किमि कै** कैसे (किस हृदय से) **बिलोचन** आँख **तून** तरकस **सरासन** धनुष **सुठि** सुंदर **सुभाव** स्वभावत: **त्यौं** ओर **बैन** वचन **सयानी** चतुर **लाहु** लाभ **अनुराग-तड़ाग** प्रेम के सरोवर में **उदै** उदय **बिगसीं** खिलीं **मंजुल** सुंदर

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) वनपथ पर सीता को होनेवाली कठिनाइयों के बारे में लिखिए।

(2) राम से सीता ने क्या प्रश्न किया ?

(3) सीता की आतुरता देखकर राम की क्या प्रतिक्रिया होती है ?

(4) 'धरि धीर दए' का आशय क्या है ?

(5) रानी-राजा के विषय में ग्राम वधुएँ क्या कहती हैं ?

(6) वनपथ पर राम किस तरह सुशोभित हो रहे हैं ?

(7) सीता ग्रामवधुओं के प्रश्न का उत्तर संकेत में क्यों देती हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) प्रथम सवैया में कवि ने राम-सीता के किस प्रसंग का वर्णन किया है ?

(2) राम के वनवास के बारे में ग्रामवधुएँ क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करती हैं ?

(3) ग्रामवधुओं ने सीता से क्या प्रश्न किया ?

(4) सीता ने ग्रामवधुओं के प्रश्न का उत्तर किस तरह दिया ?

(5) 'वनपथ पर' प्रसंग से पाँच पंक्तियाँ ढूँढ़कर लिखिए, जिनमें राम के रूप सौंदर्य का वर्णन किया गया है?

(6) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

'अनुराग-तड़ाग में भानु उदै, बिगसीं मनो मंजुल कंज-कली।'

योग्यता-विस्तार

'सुनि सुन्दर बैन सुधारस-साने सयानी हैं जानकी जानी भली।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली॥'

- उपर्युक्त पंक्तियों की तुलना 'रामचरित मानस' की निम्नलिखित पंक्तियों से कीजिए :

बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सियँ सयानी॥

•

3 दोहे

दयाराम

(जन्म : सन् 1767 ई ; निधन : सन् 1825 ई.)

गुजराती कवि दयाराम का जन्म गुजरात के डभोई जिले के चांदोद नामक स्थान पर हुआ था, जो नर्मदा-किनारे एक तीर्थस्थल के रूप में प्रसिद्ध है। उनके पिता का नाम प्रभुराम नागर था। अल्पायु में ही अनाथ हो जाने के कारण प्रारंभिक जीवन संघर्षपूर्ण रहा। वे पुष्टि मार्गीय वैष्णव इच्छाराम भट्ट के शिष्य थे अत: वैष्णव भक्ति का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने कई बार भारत-भ्रमण किया। इस दौरान ब्रज-प्रदेश के अष्टछाप कवियों की कृष्ण भक्ति-कविता ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। ब्रज में ही उन्होंने वल्लभ संप्रदाय के तत्कालीन आचार्य वल्लभलालजी गोस्वामी से दीक्षा ग्रहण की तथा आजीवन पुष्टिमार्ग पर चलते रहे।

दयाराम भक्त कवि होने के साथ-साथ मानवीय प्रेम के भी गायक हैं। वे बहुभाषाविज्ञ एवं बहुश्रुत थे। दयाराम की अनेक प्रसिद्ध कृतियों में से 'रसिकवल्लभ', 'नीति भक्तिना पदो' तथा 'सतसैया' मुख्य हैं। दयाराम रचित 'सतसई' ब्रज भाषा की श्रेष्ठ रचना है, जिसमें बिहारी सतसई' की तरह शृंगार, भक्ति, नीति, दर्शन आदि अनेक विषयों का दोहा छंद में निरूपण किया गया है। दयाराम गुजरात के ब्रज-भाषा साहित्य के एक प्रमुख रचनाकार माने जा सकते हैं।

'दयाराम सतसई' में से संकलित दोहों में से **पहले** दोहे में प्रेम रूपी अमृत की प्राप्ति के लिए प्राणों से भी प्यारी प्रतिष्ठा को भी त्याग देने को कहा गया है। **दूसरे** दोहे में कहा गया है कि जब प्रेम का बाण मन को बेधता है तब लोकलाज, कुल, वेद-मर्यादा सब एक तरफ रह जाते हैं। **तीसरे** मुक्तक में प्रेम को अमृत, द्राक्ष और मिसरी से भी ज्यादा मीठा बताया गया है। **चौथे** छंद में प्रेमामृत के स्वाद की तुलना गूँगे के गुड़ से की गई है। **पाँचवें** दोहे में प्रेम को उभय पक्षी बताते हुए कवि कहता है कि जिस तरह एक हाथ से ताली नहीं बजती उसी तरह प्रेम का निर्वाह एक व्यक्ति द्वारा संभव नहीं है। **छठे** छंद में कहा गया है कि तन-मन को तपाये बिना प्रेमरस का स्वाद चख पाना संभव नहीं है, ठीक उसी तरह जैसे दीपक जले बिना स्नेह रूपी तेल का पान नहीं कर पाता।

सब तें प्यारे प्रान, पत प्यारी हैं प्रांनतें।
सहि ताहु की हांन, चाखें प्रेम-पियुष जो ॥ 1 ॥

लोक लाज कुल बेद, छूटे सबे बिबेक बल।
परे हृदे जब छेद, दुसह प्रेम के बानकों ॥ 2 ॥

ऐसो मीठो नहि पियुष, नहि मिसरी नहि दाख।
तनक प्रेम माधुर्य पें, नोंछावर अस लाख ॥ 3 ॥

प्रेमामृत को स्वाद कस, को कबु कह्यों न जांइ।
अनुभविकों हिय जांन ही, मुक मिसरी की नांइ ॥ 4 ॥

प्रीत निभाई द्वें सकें, इकसु न निबहन हारि।
देखी सुनि न कहुं बजी, एक हाथ सूं तारि ॥ 5 ॥

प्रेम नेम यह वह लहें, दहें मन्न निति देह।
बरें बिना दीपहु न ज्यों, पावत पिवन सनेह ॥ 6 ॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

पत प्रतिष्ठा **सहि** सहने के लिए **हांन** हानि **बेद** वेद **छूटे** धरा रह जाता है **हृदे** हृदय **बान** बाण **पियुष** अमृत **दाख** द्राक्ष **कस** कैसा **कबु** कभी भी **अनुभाविकों** अनुभवी का **मुक** गूँगा **द्वें** दोनों **इकसु** एक के **तारि** ताली **लहें** प्राप्त करता है **दहें** जलाए **मन्न** मन **देह** तन, शरीर **बरें** जले **दीपहु** दीपक **सनेह** स्नेह (तेल)

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) प्रेम-पीयूष का आस्वाद कौन कर सकता है ?

(2) प्रेम का बाण कलेजे में लगने पर क्या होता है ?

(3) प्रेम के मिठास के संबंध में कवि ने क्या कहा है ?

(4) 'मुक मिसरी की नांइ' उदाहरण द्वारा कवि क्या कहना चाहता है ?

(5) प्रेम को उभयपक्षी क्यों बताया गया है ?

(6) प्रेम के नियम की क्या विशेषता है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) दोहों के आधार पर दयाराम के प्रेम संबंधी विचार अपने शब्दों में लिखिए।

(2) निम्नलिखित दोहे की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

प्रेम नेम यह वह लहें, दहें मन्न निति देह।
बरें बिना दीपहु न ज्यों, पावत पिवन सनेह॥

योग्यता-विस्तार

- 'दयाराम सतसई' से प्रेम-संबंधी अन्य पाँच दोहे ढूँढ़कर लिखिए।
- दयाराम के संकलित दोहों से मिलते-जुलते भावोंवाले कबीर और बिहारी के कुछ दोहों का संकलन कीजिए।

●

4 कवित्त और सवैया

पद्माकर

(जन्म : सन् 1753 ई ; निधन : सन् 1833 ई.)

रीतिकाल के अंतिम दौर के कवि पद्माकर का जन्म मध्यप्रदेश के सागर जिले में हुआ था। ये मूलत: तैलंग ब्राह्मण थे, परंतु इनके पिता मोहनलाल भट्ट बाँदा के निवासी थे। साहित्यिक वातावरण में पालन-पोषण होने के कारण इन्होंने अल्पकाल में ही संस्कृत एवं हिन्दी का अच्छा अभ्यास कर लिया था। पद्माकर कई राजदरबारों में रहे और इनका वैभव-विलास किसी राजा से कम नहीं था। जीवन के अंतिम दिनों में विरक्त होकर कानपुर के निकट गंगा-तट पर रहने लगे और वहीं अंतिम साँस ली।

पद्माकर कवि के साथ-साथ आचार्य भी थे। इनके द्वारा रचित ग्रंथों में 'राम रसायन', 'जगद्विनोद', 'पद्माभरण', 'गंगालहरी', 'हितोपदेश', 'प्रबोध पचासा', 'जयसिंह बिरुदावली' मुख्य हैं। इनकी कविता में शृंगार एवं भक्ति दोनों का निरूपण हुआ है। ब्रज भाषा का माधुर्य, अनुप्रास की छटा, वर्णन में चित्रात्मकता इनकी कविता के प्रमुख गुण हैं। सवैया और कवित्त रचने में कवि को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

संकलित **कवित्त** में वसंत की अनन्य शोभा का चित्रण है। ब्रज के बागों में, वन और उद्यानों में, कुंजों और कछारों में अर्थात् हर दिशा में चारों ओर वसंत की सुंदरता व्याप्त है।

संकलित **सवैये** में फागुन में कृष्ण के साथ गोपी के होली खेलने का वर्णन है। कृष्ण को अबीर-गुलाल से रंगकर गोपी उन्हें अगले वर्ष फिर से होली खेलने आने का शरारत भरा निमंत्रण देती है। गेयता इस छंद की प्रमुख लाक्षणिकता है।

कवित्त

कूलन मैं केलि मैं कछारन मैं कुंजन मैं,
क्यारिन मैं कलिन कलीन किलकन्त है।
कहै पद्माकर परागहू मैं पौनहूँ मैं,
पानन मैं पीक मैं पलाशन पगन्त है।
द्वार मैं दिसान मैं दुनी मैं देस देसन मैं,
देखो दीप दीपन मैं दीपत दिगन्त है।
बीथिन मैं ब्रज मैं नबेलिन मैं बेलिन मैं,
बनन मैं बागन मैं बगरो बसन्त है।

सवैया

फाग के भीर अभीरन मैं गहि गोविन्द लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मन की पद्माकर ऊपर नाइ अबीर की झोरी।
छीनि पितम्बर कम्मर तैं सु बिदा दई मीड़ि कपोलनि रोरी।
नैन नचाइ कह्यो मुसक्याइ लला फिरि आइयो खेलन होरी

शब्दार्थ-टिप्पणी

कूलन किनारा **केलि** क्रीडा, खेल **कछारन** नदी या समुद्र किनारे की भूमि **पौनहूँ** पवन **दुनी** दुनिया **दीपत** चमक, शोभा **दिगन्त** दिशा **बीथिन** मार्ग **बगरो** बिखरा हुआ **भीर** भीड़ **अभीरन** ग्वाले **गहि** पकड़कर **मीड़ि** मलकर **कपोल** गाल

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवित्त में किसके विविध रूपों की बात की गई है ?

(2) 'बनन मैं बागन मैं बगरो बसन्त है' पंक्ति में कौन-सा अलंकार है ?

(3) किसे कहाँ से पकड़कर गोपी भीतर ले गई ?

(4) कृष्ण के साथ गोपी ने क्या किया ?

(5) अंत में गोपी कृष्ण को फिर आने के लिए किस तरह निमंत्रण देती है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कवित्त के आधार पर वसंत ऋतु की अनन्य शोभा का चित्रण कीजिए।

(2) होली के प्रसंग का वर्णन अपने शब्दों में लिखिए।

(3) निम्नलिखित पंक्तियों का ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

छीनि पितम्बर कम्मर तैं सु बिदा दई मीड़ि कपोलनि रोरी।
नैन नचाइ कह्यो मुसक्याइ लला फिर आइयो खेलन होरी॥

योग्यता-विस्तार

- कवित्त और सवैये के वाचन का एक पारंपरिक ढंग है। लय सहित इनके वाचन का अभ्यास करें।
- निराला की प्रस्तुत कविता पढ़िए और संकलित कवित्त-सवैये के संदर्भ में विचार कीजिए :

फूटे हैं आमों में बौर
भौंर वन-वन टूटे हैं।
होली मची ठौर - ठौर,
सभी बंधन छूटे हैं।

फागुन के रंग राग,
बाग-वन फाग मचा है,
भर गए मोती के झाग,
जनों के मन लूटे हैं।

माथे अबीर से लाल,
गाल सेंदुर के देखे,
आँखें हुई हैं गुलाल,
गेरू के ढेले कूटे हैं।

●

5 मुफ़लिसी

नज़ीर अकबराबादी

(जन्म : सन् 1735 ई ; निधन : सन् 1880 ई.)

उर्दू शायर नजीर अकबराबादी का जन्म दिल्ली में हुआ था। उनका मूल नाम वली मुहम्मद था। पिता का नाम मुहम्मद फारूक था। उनकी माता आगरा के किलेदार नवाब सुल्तान खाँ की बेटी थीं। नज़ीर के जन्म के बाद दिल्ली में लगातार मुसीबतें आती रहीं। सन् 1939 में नादिरशाह का आक्रमण हुआ। इसके बाद अहमदशाह अब्दाली ने तीन बार हमला किया। अत: बाईस-तेईस साल की उम्र में नज़ीर अपनी माता एवं नानी के साथ दिल्ली से अकबराबाद (आगरा) चले गए और मृत्युपर्यंत वहीं रहे। वे स्वभाव से संतोषी एवं मस्त-मन थे अत: नवाबों के बुलावे पर भी नहीं गए।

नज़ीर ने बहुत लिखा लेकिन सब कुछ सहेज कर नहीं रख पाए। उनकी कविता सही मायने में जीवन का दर्पण है। वे एक ऐसे उदार उर्दू शायर थे जिन्होंने एक ओर जन-संस्कृति को आत्मसात किया और दूसरी ओर बोलचाल के हिन्दी शब्दों को सहजता से स्वीकार किया। उन्होंने अलंकारिक चमत्कृति से दूर रहकर प्रत्यक्ष काव्य-कला के दर्शन कराए। उनके शिष्यों द्वारा सुरक्षित उनकी कुछ कृतियाँ मिलती हैं - 'एक कुल्लियात उर्दू का' जिसमें नज्में और ग़जल् हैं, 'एक दीवान फारसी नज्मों का।' फारसी गद्य में रचित नौ रचनाओं का उल्लेख भी प्राप्त होता है। दिल्ली छोड़ने के बाद अकबराबाद में रहने के कारण वे अकबराबादी कहलाए।

प्रस्तुत कविता में 'मुफ़लिसी' अर्थात् गरीबी को जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप बताया गया है। मुफलिसी आदमी को कैसे-कैसे सताती है, तड़पाती-तरसाती है, इसका हृदय-स्पर्शी वर्णन कवि ने किया है। जीते जी आदमी को रोज-मर्रा के जीवन के लिए जरूरी चीजें तो नसीब नहीं ही होती हैं, मरने पर कफन और लकड़ी तक नहीं मिलती। रोटी के लिए संघर्ष करता हुआ आदमी, आदमी न रहकर जानवर बन जाता है। मुफ़लिसी आदमी को घर से बेघर कर देती है और लोग एक-एक कर मुँह मोड़ लेते हैं।

जब आदमी के हाल पे आती है मुफ़लिसी
किस-किस तरह से उसको सताती है मुफ़लिसी
प्यासा तमाम रोज़ बिठाती है मुफ़लिसी
भूखा तमाम रात सुलाती है मुफ़लिसी
यह दुख वो जाने जिस पे कि आती है मुफ़लिसी।

मुफ़लिस की कुछ नज़र नहीं रहती है आन पर
देता है अपनी जान वो एक-एक नान पर
हर आन टूट पड़ता है रोटी के ख्वान पर
जिस तरह कुत्ते लड़ते हैं इक उस्तख्वान पर
वैसा ही मुफ़लिसों को लड़ाती है मुफ़लिसी।

लाज़िम है गर ग़मी में कोई शोरग़ुल मचाय
मुफ़लिस बगैर ग़म के ही करता है हाय-हाय
मर जाय गर कोई तो कहाँ से उसे उठाय
इस मुफ़लिसी की ख्वारियां क्या-क्या कहूँ मैं हाय
मुर्दे को बेकफ़न के गड़ाती है मुफ़लिसी।
बीवी की नथ न लड़के के हाथों कड़े रहे
कपड़े मियां के बनिये के घर में पड़े रहे
जब कड़ियां बिक गईं तो खंडहर में पड़े रहे
जंजीर नै किवाड़ न पत्थर गड़े रहे
आखिर को ईंट-ईंट खुदाती है मुफ़लिसी।
बेटे का ब्याह हो तो न भाई न साथी है
नै रोशनी न बाजे की आवाज़ आती है
मां पीछे एक मैली चदर ओढ़े जाती है
बेटा बना है दूल्हा तो बाबा बराती है
मुफ़लिस की यह बरात चढ़ाती है मुफ़लिसी।
दरवाजे पर ज़नाने बजाते हैं तालियां
और घर में बैठी डोमनी देती हैं गालियां
मालिन गले की हार हो दौड़ी ले डालियां
सक्का खड़ा सुनाता है बातें रिजालियां
यह ख्वारी यह खराबी दिखाती है मुफ़लिसी।
कोई ''शूम, बेहया'' कोई बोला निखट्टू है
बेटी ने जाना बाप तो मेरा निखट्टू है
बेटे पुकारते हैं कि ''बाबा निखट्टू है''
बीवी ये दिल में कहती ''है अच्छा निखट्टू है''
आखिर निखट्टू नाम धराती है मुफ़लिसी।
चूल्हा तवा न पानी के मटके में आबी है
पीने को कुछ, न खाने को और न रकाबी है
मुफ़लिस के साथ सब के तईं बेहिजाबी है
मुफ़लिस की जोरू सच है कि हां सबकी भाभी है
इज्जत सब उसके दिल की गंवाती है मुफ़लिसी।
मुफ़लिस किसी का लड़का जो ले प्यार से उठा
बाप उसका देखे हाथ का और पांव का कड़ा
कहता है कोई ''जूती न लेवे कहीं चुरा''
नटखट, उचक्का, चोर, दग़ाबाज़, गठकटा
सौ-सौ तरह के ऐब लगाती है मुफ़लिसी।

शब्दार्थ-टिप्पणी

मुफ़लिसी गरीबी **आन** मर्यादा, लिहाज **नान** रोटी **ख्वान** थाल **उस्तख्वान** हड्डी **ख्वारी** बर्बादी **नै** न **डोमनी** डोम जाति की स्त्री **सक्क़ा** भिश्ती **रिजालियां** बेहूदा **आबी** आब (पानी) ही **बेहिजाबी** खुलापन

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) आदमी को भूखा-प्यासा सोने के लिए कौन मज़बूर कर देता है ?

(2) मुफ़लिस 'आन' की परवाह किए बिना क्या करता है ?

(3) गरीबी का असर मुर्दे पर किस रूप में दिखाई देता है ?

(4) मुफ़लिसी में मिया-बीवी-बच्चे और घर का क्या हाल होता है ?

(5) मुफ़लिस के घर की शादी दूसरों से किस तरह भिन्न होती है ?

(6) मुफ़लिस किसी का लड़का प्यार से उठा ले तो लोग उसे किस नज़र से देखते हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'मुफ़लिसी' कविता का केन्द्रीयभाव अपने शब्दों में लिखिए।

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

'लाज़िम है गर गमी में कोई शोरगुल मचाय
मुफ़लिस बगैर गम के ही करता है हाय-हाय'

योग्यता-विस्तार

- नज़ीर अकबराबादी की 'बंजरानामा' कविता ढूँढ़कर पढ़िए और कक्षा में सुनाइए।

●

6

श्रद्धा का उद्‌बोधन

जयशंकर प्रसाद

(जन्म : सन् 1889 ई ; निधन : सन् 1937 ई.)

छायावाद के चार आधार-स्तंभों में से एक-प्रसादजी का जन्म काशी के एक संपन्न सुँघनी साहू घराने में हुआ था। बाल्यकाल में ही माता-पिता का साया सिर से उठ जने के कारण उनकी शिक्षा आठवीं कक्षा से आगे न बढ़ सकी। उन्होंने घर पर ही उर्दू, फारसी और संस्कृत का अध्ययन किया। उन्हें साहित्य के साथ-साथ इतिहास, दर्शन, वेद, पुराण एवं उपनिषदों का भी अच्छा ज्ञान था। प्रसादजी ने कविता के साथ-साथ नाटक, कहानी, निबंध और उपन्यास जैसी विधाओं में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इस दृष्टि से वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार माने जा सकते हैं।

'कामायनी' नामक महाकाव्य उनकी काव्य-यात्रा की सबसे बड़ी उपलब्धि है। 'कामायनी' एक श्रेष्ठ रूपक है जिसमें मनु और श्रद्धा के मिलन से मानव-सृष्टि के प्रवर्तन की कथा है। 'कानन-कुसुम', 'लहर', 'झरना', 'आँसू' उनकी अन्य मुख्य काव्य-कृतियाँ हैं। उन्होंने 'कंकाल और तितली' जैसे उपन्यास एवं 'आकाश दीप', 'इंद्रजाल', 'प्रतिध्वनि' जैसे कहानी-संग्रहों की रचना की। उन्होंने 'चंद्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त' तथा 'ध्रुवस्वामिनी' जैसे ऐतिहासिक नाटकों की रचना कर हिन्दी नाटक को समृद्ध किया। उनकी कविता में प्रेम, सौंदर्य, भावुकता का स्वर मुखर है जबकि अन्य विधाओं में यथार्थ के स्वर भी सुने जा सकते हैं। प्रसादजी की भाषा तत्सम्-प्रधान एवं समास-बहुल होती है।

प्रस्तुत पद्यांश 'कामायनी' के 'श्रद्धा' सर्ग से लिया गया है। श्रद्धा 'कामायनी' का प्रमुख चरित्र है जो प्रतीक है हृदय का, प्रेमका, सकारात्मक सोच और विश्वास का। वह जल-प्लावन से पीड़ित हताश मनु में नई आशा और आस्था का संचार करती है। वह परिवर्तन को प्रकृति एवं संसार का सहज क्रम बताते हुए रात्रि के बाद प्रभात, दु:ख के बाद सुख के आगमन को सहज होने की बात करती है। वह प्रेम को विधाता का मंगल वरदान बताती हुई मनु के प्रति समर्पित हो नव-जीवन के आरंभ का संकेत देती है। श्रद्धा के साहचर्य से मनु के थके-हारे मन में एक नई आशा, आस्था और विश्वास का उदय-उन्मेष होता है।

''दु:ख की पिछली रजनी बीच
        विकसता सुख का नवल प्रभात;
एक परदा यह झीना नील
        छिपाये है जिसमें सुख गात।

जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
        जगत की ज्वालाओं का मूल;
ईश का वह रहस्य वरदान
        कभी मत इसको जाओ भूल;

विषमता की पीड़ा से व्यस्त
        हो रहा स्पंदित विश्व महान;
यही दु:ख सुख विकास का सत्य
        यही भूमी का मघुमय दान।

नित्य समरसता का अधिकार,
उमड़ता कारण जलधि समान;
व्यथा से नीली लहरों बीच
बिखरते सुख मणि गण द्युतिमान।

लगे कहने मनु सहित विषाद :-
''मधुर मारुत से ये उच्छ्वास
अधिक उत्साह तरंग अबाध
उठाते मानस में सविलास।

किंतु जीवन कितना निरुपाय !
लिया है देख नहीं संदेह;
निराशा है जिसका परिणाम,
सफलता का वह कल्पित गेह।''

कहा आगंतुक ने सस्नेह :-
अरे, तुम इतने हुए अधीर !
हार बैठे जीवन का दाँव
जीतते मर कर जिसको वीर।

तप नहीं केवल जीवन सत्य
करुण यह क्षणिक दीन अवसाद;
तरल अकांक्षा से है भरा
सो रहा आशा का आह्लाद।

प्रकृति के यौवन का शृंगार
करेंगे कभी न बासी फूल;
मिलेंगे वे जाकर अति शीघ्र
आह उत्सुक है उनकी धूल।

पुरातनता का यह निर्मोह
सहन करती न प्रकृति पल एक;
नित्य नूतनता का आनंद
किए है परिवर्तन में टेक।

युगों की चट्टानों पर सृष्टि
डाल पद-चिह्न चली गंभीर;
देव, गंधर्व, असुर की पंक्ति
अनुसरण करती उसे अधीर।

''एक तुम, यह विस्तृत भू खंड''
प्रकृति वैभव से भरा अमंद;
कर्म का भोग, भोग का कर्म
यही जड़ का चेतन आनंद।

अकेले तुम कैसे असहाय
यजन कर सकते? तुच्छ विचार !
तपस्वी ! आकर्षण से हीन
कर सके नहीं आत्म विस्तार।

दब रहे हो अपने ही बोझ
खोजते भी न कहीं अवलंब;
तुम्हारा सहचर बन कर क्या न
उऋण होऊँ मैं बिना बिलम्ब ?

समर्पण लो सेवा का सार
सजल संसृति का यह पतवार,
आज से यह जीवन उत्सर्ग
इसी पद तल में विगत विकार।

दया, माया, ममता लो आज,
मधुरिमा लो, अगाध विश्वास;
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिए खुला है पास।

बनो संसृति के मूल रहस्य,
तुम्हीं से फैलेगी वह बेल;
विश्व भर सौरभ से भर जाय
सुमन के खेलो सुन्दर खेल।

शब्दार्थ-टिप्पणी

रजनी रात **स्पंदित** हिलता हुआ, गतिशील **भूमा** पृथ्वी **मधुमय** अमृत मय **समरसता** समन्वय, मेल **गेह** घर **अवसाद** दु:ख **यजन** विधिवत् **संसृति** जगत

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) 'दु:ख की पिछली रजनी बीच विकसता सुख का नवल प्रभात' का आशय बताइए।

(2) श्रद्धा ने पृथ्वी का मधुमय दान किसे बताया है ?

(3) समुद्र के दृष्टांत द्वारा श्रद्धा क्या कहती है ?

(4) मनु जीवन को निरुपाय बताते हुए क्या कहते हैं ?

(5) श्रद्धा मनु को प्रेरित करने के लिए क्या कहती है ?

(6) प्रकृति अपने यौवन का शृंगार किससे करती है ?

(7) श्रद्धा पुरातन का मोह त्याग करने के लिए क्यों कहती है ?

(8) किसके विनाश को श्रद्धा ने परिवर्तन के प्रमाण रूप में बताया है ?

(9) जड़ (प्रकृति) चेतन-आनंद क्या है ?

(10) श्रद्धा स्वयं को कैसे उऋण करना चाहती है ?

(11) मनु को श्रद्धा अपने हृदय के खजाने से क्या देना चाहती है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) मनु दु:खी होकर क्या कहने लगे ?

(2) श्रद्धा परिवर्तन का दर्शन समझाते हुए क्या कहती है ?

(3) श्रद्धा स्वयं को सहचर के रूप में स्वीकार करने के लिए मनु से क्या कहती है ?

(4) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(अ) बनो संसृति के मूल रहस्य,
तुम्हीं से फैलेगी वह बेल;
विश्व भर सौरभ से भर जाय
सुमन के खेलो सुंदर खेल।

(ब) पुरातनता का यह निर्मोह
सहन करती न प्रकृति पल एक;
नित्य नूतनता का आनंद
किए है परिवर्तन में टेक।

योग्यता-विस्तार

- 'कामायनी' का श्रद्धा सर्ग पढ़िए।

●

7 जाग तुझको दूर जाना

महादेवी वर्मा

(जन्म : सन् 1907 ई ; निधन : सन् 1987 ई.)

छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का जन्म उत्तरप्रदेश के फर्रूखाबाद में हुआ था। उनकी शिक्षा प्रयाग में हुई और प्रयाग महिला विद्यापीठ में लम्बे समय तक प्रधानाचार्या के पद पर रहीं। उनकी कविता में छायावाद और रहस्यवाद दोनों घुल-मिल गए हैं। प्रकृति में अलौकिक चेतना का आरोपण इस बात का प्रमाण है। बौद्ध दर्शन के दु:खवाद से प्रभावित होने के कारण मधुमय वेदना और करुणा उनकी कविता का प्राण तत्त्व बन गया है। 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'दीपशिखा' आदि प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं। 'यामा' के लिए उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उनकी अधिकांश कविताएँ गीतिमय हैं।

एक सफल कवयित्री होने के साथ-साथ वे एक अच्छी गद्यकार भी हैं। उनकी कविता में भावावेग की अभिव्यक्ति है तो गद्य में यथार्थ का स्वर मुखर है। अपने रेखाचित्रों में उन्होंने समाज के दीन-हीन, शोषित उपेक्षित वर्ग के प्रति गहरी संवेदनशीलता का परिचय दिया है। पशु-पक्षियों तक उनकी संवेदना का विस्तार देखा जा सकता है। अपने जीवन पथ पर साथ चले साथी सर्जकों एवं महानुभावों से जुड़ी अंतरंग स्मृतियों को उन्होंने अपने संस्मरणों में बड़ी सहृदयता से सँजोया है। 'स्मृति की रेखाएँ', 'अतीत के चलचित्र', 'पथ के साथी' तथा 'मेरा परिवार' उनकी श्रेष्ठ गद्य-रचनाएँ हैं। कविता की तुलना में उनकी गद्य-भाषा अधिक सरल और सहज है।

प्रस्तुत कविता का स्वर महादेवीजी की अन्य कविताओं से अलग है। यहाँ भावुकता के बदले यथार्थ की अभिव्यक्ति है। इस कविता में आलस्य और प्रमाद से ग्रस्त उनींदे पथिक को जागने और कर्तव्य-मार्ग पर अग्रसर होने को कहा गया है। यदि हमारी संकल्प शक्ति दृढ़ है तो न तो संसार का कोई भी आकर्षण हमें बाँध सकता है, न तो प्रभंयकारी ताकतें हमारे मार्ग की बाधा बन सकती हैं और न ही मृत्यु का भय हमें भयभीत कर सकता है। कर्तव्य-पथ पर बढ़ते रहने की अटूट लगन हार को भी विजय में बदल सकती है। जिस प्रकार पतंगा दीपक पर अपने को बलि चढ़ाकर अमर हो जाता है, उसी तरह लक्ष्य - सिद्धि के लिए प्राण न्यौछावर कर देने वाला अमर हो जाता है। इस कविता में कवयित्री व्यक्ति-मन के स्पंदन के साथ-साथ विश्व-क्रंदन को सुनती हुई दिखाई देती हैं। ओजपूर्ण शब्द की लय इस कविता में सुनाई देती है।

चिर सजग आँखें उनींदी आज कैसा व्यस्त बाना !
जाग तुझको दूर जाना!

अचल हिमगिरि के हृदय में आज चाहे कम्प हो लेए !
या प्रलय के आँसुओं में मौन अलसित व्योम रो ले;
आज पी आलोक को डोले तिमिर की घोर छाया,
जाग या विद्युत-शिखाओं में निठुर तूफान बोले !
पर तुझे है नाश-पथ पर चिह्न अपने छोड़ आना !
जाग तुझको दूर जाना!

बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बन्धन सजीले ?
पन्थ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रँगीले ?
विश्व का क्रन्दन भुला देगी मधुप की मधुर गुनगुन,
क्या डुबा देंगे तुझे यह फूल के दल ओस - गीले ?
तू न अपनी छाँह को अपने लिए कारा बनाना !
जाग तुझको दूर जाना !

वज्र का उर एक छोटे अश्रुकण में धो गलाया,
दे किसे जीवन - सुधा दो घूँट मदिरा माँग लाया ?
सो गई आँधी मलय की वात का उपधान ले क्या ?
विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया ?
अमरता-सुत चाहता क्यों मृत्यु को उर में बसाना ?
जाग तुझको दूर जाना !

कह न ठंडी साँस में अब भूल वह जलती कहानी,
आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी;
हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका,
राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी !
है तुझे अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना !
जाग तुझको दूर जाना !

शब्दार्थ-टिप्पणी

बाना भेस, वेश-विन्यास **उनींदी** नींद से भरी, अलसाई हुई **नाश-पथ** जिस राह पर चलने का परिणाम स्वयं के लिए कष्टकारक हो। **विद्युत-शिखा** बिजली की रेखा **मधुप** भौंरा, भ्रमर **कारा** बंधन **अमरता** अमरत्व **मानिनी** मान करने वाली, गर्वीली **मृदुल** कोमल

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) किसे दूर जाने की स्मृति दिलाई जाती है ? इसकी आवश्यकता क्यों हुई है ?

(2) कौन-सी अनहोनी घटनाएँ होने पर भी पथिक को रुकना नहीं है ?

(3) पथिक के लिए कौन-कौन से प्रलोभन बंधन रूप हो सकते हैं ?

(4) पथिक का लक्ष्य क्या है ? उसके संबंध में कवयित्री ने क्या-क्या उपमाएँ दी हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'जाग तुझको दूर जाना' कविता में मानव को उसकी अमरता का स्मरण कराते हुए, संसार के क्षणिक सुख-दु:ख में भी अपने अमरत्व के प्रति जाग्रत रहने के लिए कहा गया है, समझाइए।

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

'हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका,
राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी !
है तुझे अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना !
जाग तुझको दूर जाना !'

योग्यता-विस्तार

- महादेवी वर्मा की 'प्राण रहने दो अकेला' कविता ढूँढ़कर पढ़िए और 'जाग तुझको दूर जाना' कविता से तुलना कीजिए।

•

8 उनको प्रणाम !

नागार्जुन

(जन्म : सन् 1911 ई. ; निधन : सन् 1998 ई.)

प्रगतिशील रचनाकार बाबा नागार्जुन का मूल नाम है वैद्यनाथ मिश्र 'यात्री'। वे बिहार के दरभंगा जिले के तरौनी गाँव के निवासी थे किंतु उनका जन्म उनके ननिहाल शतलखा गाँव में हुआ था। उनकी स्कूली शिक्षा नहीं हुई किंतु उन्हें हिन्दी और संस्कृत के अलावा कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। वे किसान आंदोलन में सक्रिय रहे और जेल भी गए। उन्होंने तिब्बत, श्रीलंका और रूस की यात्राएँ कीं। हिन्दी के साथ-साथ मैथिली, बंगला और संस्कृत में भी कविताएँ लिखी हैं।

नागार्जुन की कविता का दायरा बहुत व्यापक है। प्रकृति और प्रेम से लेकर समाज और राजनीति तक उनका क्षेत्र फैला हुआ है। कथ्य एवं शिल्प में कई प्रयोग करने के बावजूद उनकी प्रतिबद्धता गाँव-शहर के उस अभावग्रस्त सामान्य जन के प्रति ही रही है जिसने जीवन-संघर्ष से कभी हार नहीं मानी। मार्क्सवाद और बौद्ध दर्शन दोनों का उन पर गहरा प्रभाव था। जनतंत्र और समाजवाद में उनकी गहरी आस्था थी। 'युगधारा', 'सतरंगे पंखों वाली', 'प्यासी पथरायी आँखें', 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने', 'भष्मांकुर', हजार-हजार बाँहों वाली', 'पुरानी जूतियों का कोरस', 'इस गुब्बारे की छाया में' उनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं। 'रति नाथ की चाची', 'बलचनमा', 'नई पौध', 'बाबा बटेसर नाथ', 'वरुण के बेटे' और 'दुखमोचन' उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। उनके मैथिली काव्य संग्रह 'पत्रहीन नग्न गाछ' को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

प्रस्तुत कविता में उन लोगों के प्रति आदर और श्रद्धा व्यक्त की गई है जो अपनी सारी शक्ति और सामर्थ्य के साथ बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लड़ रहे थे, जूझ रहे थे। किंतु परिस्थिति वश, अदृष्ट ताकतों ने उन्हें सफलता तक नहीं पहँचने दिया। जिन लोगों ने बड़े-बड़े बलिदान दिए लेकिन विज्ञापन से दूर रहे और दुनिया उनको भूल गई। ऐसे सब लोगों को कवि प्रणाम कर अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करता है। मनुष्य-मात्र की कर्मठता के प्रति कवि की गहरी प्रतिबद्धता इस कविता में व्यक्त होती है।

जो नहीं हो सके पूर्ण-काम
मैं उनको करता हूँ प्रणाम।
कुछ कुंठित औ' कुछ लक्ष्य-भ्रष्ट
जिनके अभिमंत्रित तीर हुए;
रण की समाप्ति के पहले ही
जो वीर रिक्त तूणीर हुए!
उनको प्रणाम !

जो छोटी-सी नैया लेकर
उतरे करने को उदधि-पार;
मन की मन में ही रही, स्वयं
हो गए उसी में निराकार!
उनको प्रणाम !

जो उच्च शिखर की ओर बढ़े
रह-रह नव-नव उत्साह भरे;
पर कुछ ने ले ली हिम-समाधि
कुछ असफल ही नीचे उतरे !
उनको प्रणाम !

एकाकी और अंकिचन हो
जो भू-परिक्रमा को निकले;
हो गए पंगु, प्रति-पद इतने
इतने अदृष्ट के दाव चले!
उनको प्रणाम !

कृत-कृत्य नहीं जो हो पाए;
प्रत्युत फाँसी पर गए झूल
कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी
यह दुनिया जिनको गई भूल!
उनको प्रणाम !

थी उग्र साधना, पर जिनका
जीवन-नाटक दु:खांत हुआ;
या जन्म-काल में सिंह लग्न
पर कुसमय ही देहांत हुआ!
उनको प्रणाम !

दृढ़ व्रत औ' दुर्दम साहस के
जो उदाहरण थे मूर्ति-मंत;
पर निरवधि बंदी जीवन ने
जिनकी धुन का कर दिया अंत!
उनको प्रणाम !

जिनकी सेवाएँ अतुलनीय
पर विज्ञापन से रहे दूर;
प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके
कर दिए मनोरथ चूर-चूर!
उनको प्रणाम !

शब्दार्थ-टिप्पणी

कुंठित कुंद, भोथरा **लक्ष्य-भ्रष्ट** निशाना चूक गए **अभिमंत्रित** मंत्रसिद्ध **तूणीर** तरकस **उदधि** समुद्र **अकिंचन** दरिद्र **पंगु** लँगड़ा **अदृष्ट** भाग्य **प्रत्युत** बल्कि **दुर्दम** जिसका दमन करना या दबाना कठिन हो **मूर्ति-मंत** साक्षात् **निरवधि** अनंत

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) 'पूर्ण-काम' शब्द से कवि का क्या आशय है ?

(2) छोटी-सी नाव लेकर समुद्र पार करना किसका सूचक है ?

(3) कवि किन असफल लोगों को प्रणाम कर रहा है ?

(4) दुनिया किसको भूल चुकी है ?

(5) जो सफल नहीं हो पाए उनका क्या हुआ ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कविता का केन्द्रीय भाव अपने शब्दों में लिखिए।

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

जिनकी सेवाएँ अतुलनीय
पर विज्ञापन से दूर रहे
प्रतिकूल परिस्थितियों ने जिनके
कर दिए मनोरथ चूर-चूर !
उनको प्रणाम !

योग्यता-विस्तार

- एन. सी. ई. आर. टी. द्वारा नागार्जुन पर बनाई गई फिल्म देखिए।

•

9 सतपुड़ा के जंगल

भवानी प्रसाद मिश्र

(जन्म : सन् 1914 ई. ; निधन : सन् 1985 ई.)

नई कविता के सफल गीतिकार भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के टिगरिया गाँव में हुआ था। उन्होंने संस्कृत उर्दू, मराठी, बंगला और फारसी आदि भाषाओं का अध्ययन किया। 'दूसरा सप्तक' में उनकी कविताएँ संकलित हुईं। अध्यापन, संपादन और आकाशवाणी उनके कार्यक्षेत्र रहे। 'संपूर्ण गाँधी साहित्य' के संपादक मंडल के सदस्य भी रहे।

मिश्रजी की रचनाओं में वैचारिक प्रबुद्धता और संवेदना का अद्‌भुत सामंजस्य देखा जा सकता है। सादगी और ताजगी दोनों उनकी कविता में घुलमिल गए हैं। एक ओर प्रकृति के सुंदर गीतिमय चित्र को दूसरी ओर जीवन मूल्यों के विघटन की पीड़ा उनकी कविता में देखने को मिलती है। 'गीत फरोश', 'अनाम तुम आते हो', 'बुनी हुई रस्सी', 'खुश्बू के शिलालेख', 'चकित है दु:ख', 'गाँधी पंचशती', 'त्रिकाल संध्या' तथा 'फसलें और फूल' आदि उनके चर्चित काव्य संग्रह हैं। 'बुनी हुई रस्सी' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। उन्हें गालिब पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

'सतपुड़ा के जंगल' मिश्रजी की बड़ी प्रसिद्ध कविता है जिसमें सतपुड़ा के घने जंगलों की प्रकृति और संस्कृति को अपनी समग्रता और विविधता के साथ चित्रांकित किया गया है। सतपुड़ा के जंगलों की अनन्य सुंदरता, समग्र प्राणी जगत की गतिविधियाँ और वहाँ के गोंड आदिवासी लोगों की लोक संस्कृति के रंगों का नाद एवं लय-सौंदर्य के साथ खूबसूरत चित्रण किया गया है।

सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए-से,
ऊँघते अनमने जंगल।

झाड़ ऊँचे और नीचे
चुप खड़े हैं आँख मींचे,
घास चुप है, काश चुप है
मूक शाल, पलाश चुप हैं;
बन सके तो धँसो इनमें,
धँस न पाती हवा जिनमें,
सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते, अनमने जंगल!

सड़े पत्ते, गले पत्ते,
हरे पत्ते, जले पत्ते,
वन्य पथ को ढँक रहे-से,
पंक-दल में पले पत्ते,
चलो इन पर चल सको तो,
दलो इनको दल सको तो,
ये घिनौने-घने जंगल,
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते, अनमने जंगल!

अटपटी-उलझी लताएँ,
डालियों को खींच खाएँ
पैरों को पकड़ें अचानक,
प्राण को कस लें कँपाएँ
साँप-सी काली लताएँ
बला की पाली लताएँ
लताओं के बने जंगल,
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते, अनमने जंगल!

मकड़ियों के जाल मुँह पर,
और सिर के बाल मुँह पर,
मच्छरों के दंश वाले,
दाग काले-लाल मुँह पर,
वात-झंझा वहन करते,
चलो इतना सहन करते,
कष्ट से ये सने जंगल,
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते, अनमने जंगल!

अजगरों से भरे जंगल
अगम, गति से परे जंगल,
सात-सात पहाड़ वाले,
शेर वाले बाघ वाले,
गरज और दहाड़ वाले,
कंप से कनकने जंगल,
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते, अनमने जंगल!

इन वनों के खूब भीतर,
चार मुर्गे, चार तीतर,
पाल कर निश्चिंत बैठे,
विजनवन के बीच बैठे
झोपड़ी पर फूस डाले,
गोंड तगड़े और काले,
जब कि होली पास आती,
सरसराती घास गाती,
और महुए से लपकती,
मत्त करती बास आती,
गूँज उठते ढोल इनके,
गीत इनके, बोल इनके।

सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते अनमने जंगल,
जागते अँगड़ाइयों में
खोह-खड्डों खाइयों में
घास पागल, काश पागल,
शाल और पलाश पागल,
लता पागल, वात पागल,
डाल पागल, पात पागल,
मत्त मुर्गे और तीतर,
इन वनों के खूब भीतर।

क्षितिज तक फैला हुआ-सा,
मृत्यु तक मैला हुआ-सा,
क्षुब्ध, काली लहर वाला,
मथित, उत्थित जहर वाला,
मेरु वाला, शेष वाला,
शंभु और सुरेश वाला,
एक सागर जानते हो?
उसे कैसा मानते हो?
ठीक वैसे घने जंगल
नींद में डूबे हुए-से
ऊँघते अनमने जंगल।

धँसो इनमें डर नहीं है,
मौत का यह घर नहीं है,
उतरकर बहते अनेकों,
कल-कथा कहते अनेकों,
नदी-निर्झर और नाले,
इन वनों ने गोद पाले,
लाख पंछी सौ हिरन-दल,
चाँद के कितने किरण दल,
झूमते बन-फूल, फलियाँ,
खिल रहीं अज्ञात कलियाँ,
हरित दूर्वा, रक्त किसलय,
पूत, पावन, पूर्ण रसमय,
सतपुड़ा के घने जंगल,
लताओं के बने जंगल।

शब्दार्थ-टिप्पणी

पंक कीचड़ **बला** पृथ्वी **वात** वायु **झंझा** तेज आँधी **मत्त** मदमस्त **बास** महक **खोह** गुफा **मथित** मथा हुआ **उत्थित** उन्नत **मेरु** एक पर्वत **दूर्वा** एक घास **किसलय** नया निकला हुआ कोमल पत्ता **पावन** पवित्र

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) 'ये घिनौने-घने जंगल' ऐसा कवि ने क्यों कहा है ?

(2) जंगल में फैली लताएँ किन-किन रूपों में हैं ?

(3) गोंड आदिवासी कहाँ और किस तरह जी रहे हैं ?

(4) वन की गोद में क्या-क्या पल रहे हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) सतपुड़ा के घने जंगल का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

(2) भाव स्पष्ट कीजिए :

'धँसो इनमें डर नहीं है,
मौत का यह घर नहीं है
उतर कर बहते अनेकों,
कल-कथा कहते अनेकों,
नदी-निर्झर और नाले
इन वनों ने गोद पाले'

योग्यता-विस्तार

- भवानी प्रसाद मिश्र की 'गीत फरोश' कविता ढूँढ़कर पढ़िए और कक्षा में सुनाइए।
- 'वन-संपदा' विषय पर निबंध लिखिए।

•

10 रोटी

केदारनाथ सिंह

(जन्म : सन् 1934 ई.)

नई कविता की दूसरी पीढ़ी के सशक्त कवि केदारजी का जन्म उत्तरप्रदेश के बलिया जिले के चकिया गाँव में हुआ था। उनकी कविताओं को प्रकाशन का पहला अवसर 'तीसरा सप्तक' में मिला। जल्द ही उन्होंने अपने समकालीनों के बीच अपना एक अलग काव्य-मुहावरा बना लिया। उनकी कविता में गाँव और शहर, लोक संस्कृति और शिष्ट संस्कृति अपने संपूर्ण वैविध्य के साथ चित्रित है। अपनी धरती और अपना परिवेश ही उन्हें सृजनात्मक ऊर्जा प्रदान करता है।

कविता के साथ-साथ संगीत उन्हें बेहद प्रिय है। अपनी धरती के राग-रंग उनकी कविता में बिखरे पड़े हैं। 'अभी बिलकुल अभी', 'जमीन पक रही है', 'यहाँ से देखो', 'अकाल में सारस', 'मेरे समय के शब्द' आदि उनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं। 'अकाल में सारस' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया। इसके अतिरिक्त कुमारन आशान कविता पुरस्कार, ओडिशा का जीवन-भारती सम्मान, म.प्र. का मैथिली शरण गुप्त स्मृति-सम्मान तथा दिनकर स्मृति पुरस्कार उन्हें प्राप्त हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्व विद्यालय के भारतीय भाषा केन्द्र में लम्बे समय तक उन्होंने अध्यापन कार्य किया।

'रोटी' कविता आग पर पकती हुई रोटी की गजब की ताकत का एक अद्‌भुत आलेखन है। आग पर पकती हुई वह समूची आग को सुगंध में बदल देती है। वह मनुष्य मात्र में वैचारिक सोच और शक्ति का संचार करती है। वह हर बार ज्यादा स्वादिष्ट और खूबसूरत लगती है क्योंकि उसे खाना शुरू करते ही मनुष्य में नित नवीन संघर्ष की ऊर्जा उत्पन्न होने लगती है। कवि के विचार से वह भूख के बारे में आग का बयान है जो दीवारों पर लिखा जा रहा है और आप देखेंगे कि दीवारें भी धीरे - धीरे स्वाद में बदल रही हैं।

उसके बारे में कविता करना
हिमाक़त की बात होगी
और वह मैं नहीं करूँगा
मैं सिर्फ़ आपको आमन्त्रित करूँगा
कि आप आयें और मेरे साथ सीधे
उस आग तक चलें
उस चूल्हे तक—जहाँ वह पक रही है
एक अद्‌भुत ताप और गरिमा के साथ
समूची आग को गन्ध में बदलती हुई
दुनिया की सबसे आश्चर्यजनक चीज़
वह पक रही है
और पकना
लौटना नहीं है जड़ों की ओर

वह आगे बढ़ रही है
धीरे-धीरे
झपट्टा मारने को तैयार
वह आगे बढ़ रही है
उसकी गरमाहट पहुँच रही है आदमी की नींद
और विचारों तक
मुझे विश्वास है
आप उसका सामना कर रहे हैं
मैंने उसका शिकार किया है
मुझे हर बार ऐसा ही लगता है
जब मैं उसे आग से निकलते हुए देखता हूँ
मेरे हाथ खोजने लगते हैं
अपने तीर और धनुष
मेरे हाथ मुझी को खोजने लगते हैं
जब मैं उसे खाना शुरू करता हूँ
मैंने जब भी उसे तोड़ा है
मुझे हर बार वह पहले से ज़्यादा स्वादिष्ट लगी है
पहले से ज्यादा गोल
और खूबसूरत
पहले से ज़्यादा सुर्ख़ और पकी हुई

आप विश्वास करें
मैं कविता नहीं कर रहा
सिर्फ़ आग की ओर इशारा कर रहा हूँ
वह पक रही है
और आप देखेंगे — यह भूख के बारे में
आग का बयान है
जो दीवारों पर लिखा जा रहा है
आप देखेंगे
दीवारें धीरे-धीरे
स्वाद में बदल रही हैं।

शब्दार्थ-टिप्पणी

हिमाक़त बेवकूफी, मूर्खता, अहमक होने की अवस्था **सुर्ख** लाल

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवि कहाँ तक चलने को कहता है ?

(2) चूल्हे में क्या पक रहा है ? कैसे ?

(3) आग कैसे आगे बढ़ रही है ?

(4) कवि को ऐसा क्यों लगता है कि मैंने उसका शिकार किया है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) रोटी को दुनिया की सबसे आश्चर्यजनक चीज क्यों कहा गया है ?

(2) 'उसकी गरमाहट पहुँच रही है आदमी की नींद और विचारों तक' - समझाइए।

(3) लोग भूख का सामना कैसे कर रहे हैं ?

(4) 'रोटी' कविता आग पर पकती हुई रोटी की गजब की ताकत का अद्भुत आलेखन है, समझाइए।

(5) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

मेरे हाथ खोजने लगते हैं
अपने तीर और धनुष
मेरे हाथ मुझी को खोजने लगते हैं
जब मैं उसे खाना शुरू करता हूँ।

योग्यता-विस्तार

- 'अकाल और उसके बाद' कविता पढ़िए।
- 'मानवीनी भवाई' (गुजराती) फिल्म देखिए।

●

11 जाने कैसी हवा चली अब के अपने गाँव में

भगवानदास जैन

(जन्म : सन् 1938 ई.)

गुजरात के हिन्दी रचनाकार भगवानदास जैन का जन्म अहमदाबाद में हुआ था। उनके पूर्वज मध्यप्रदेश के सागर के निवासी थे। उन्होंने गुजरात विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय के साथ एम. ए. किया और कुछ ही समय के बाद अहमदाबाद की सरदार वल्लभभाई आर्ट्स कॉलेज में हिन्दी के अध्यापक के रूप में सेवारत् हो गए। निवृत्त भी वहीं से हुए। कविता से उनका जुड़ाव शुरू से ही रहा। ग़ज़ल उनकी सबसे प्रिय विषय रही। गजल - लिखने के साथ-साथ गजल-गायिकी भी उनका शौक रहा है।

अब तक उनके सात संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें 'रोशनी की तलाश', 'आस्था के स्वर' कविता संग्रह हैं। 'जिंदा है आइना', 'कठघरे में हूँ,', 'देख नज़ारे नई सदी के', 'जिंदगी के बावजूद' तथा 'नई परवाज' उनके ग़ज़ल-संग्रह हैं। उनके दो ग़ज़ल संग्रह हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात द्वारा पुरस्कृत हैं। उनकी अनेक रचनाएँ भारत की कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। उन्होंने कई कृतियों का हिन्दी में अनुवाद भी किया है। उनकी ग़ज़लें युग बोध से अनुप्राणित हैं। व्यवस्था के प्रति आक्रोश और पीड़ितों के प्रति संवेदनशीलता उनकी ग़ज़लों की प्रमुख पहचान है। उर्दू के निकट होते हुए भी ग़ज़लों में हिन्दी शब्दों को सहजता से सँजोया गया है।

प्रस्तुत ग़ज़ल में अकाल की मार से पीड़ित गाँव की बेहाली का बेबाक वर्णन हुआ है। चारों ओर मँहगाई, भुखमरी, उदासी और सन्नाटा छाया हुआ है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक सब बदहाल हैं। न जाने कैसी हवा चली है कि यहाँ के परिवेश में ही नहीं, दिलों में भी जहर घुल गया है। कवि के विचार से शायद यह सब कुछ शहरी संस्कृति के प्रभाव और दबाव से हो रहा है। कोई अपना दुखड़ा भी किसके सामने रोये, दिल पत्थर और चेहरे नकली हो गए हैं।

जाने कैसी हवा चली अब के अपने गाँव में।
बगिया दुखी उदास कली अब के अपने गाँव में।

हार चुके तकते-तकते हम तो निष्ठुर आसमाँ,
पर किस्मत फूली न फली अब के अपने गाँव में।

आए शहर के देवता स्वाँग रचाए मेघ का,
हर बस्ती लाचार जली अब के अपने गाँव में।

सपने चकनाचूर हुए फैले हैं यूँ हादसे,
सन्नाटा है गली-गली अब के अपने गाँव में।

होली के वे रंग गए कहाँ दिवाली के दिये,
कहीं न ताशे या डफली अब के अपने गाँव में।

दाने और खिलौने भी महँगे हुए बजार में,
सिसकें भूखे लला-लली अब के अपने गाँव में।

बचपन लकवा पीड़ित है भ्रान्त जवानी हो गई,
हाँफ रही बूढ़ी पसली अब के अपने गाँव में।

पानी और हवा में क्या घुला दिलों में विष यहाँ,
तड़प रहीं मछली-तितली अब के अपने गाँव में।

दुखड़ा अपना रोएँ हम बोलो किसके सामने,
दिल पत्थर चेहरे नकली अब के अपने गाँव में।

शब्दार्थ-टिप्पणी

स्वांग वेश **सन्नाटा** नीरवता, नि:शब्दता

मुहावरे

किस्मत न फूलना नसीब न होना **पत्थर दिल** निर्दय

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) अपने गाँव में कौन-कौन दु:खी हैं? क्यों?

(2) लोग क्यों हार चुके हैं?

(3) आसमाँ कैसा हो गया है?

(4) शहर से आया देवता किसका स्वाँग रचा के आया है?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कवि के गाँव में सन्नाटा क्यों है?

(2) गज़ल का भाव स्पष्ट कीजिए।

(3) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

बचपन लकवा पीड़ित है भ्रान्त जवानी हो गई,
हाँफ रही बूढ़ी पसली अबके अपने गाँव में।

योग्यता-विस्तार

- भगवानदास जैन की अन्य गजलें ढूँढ़कर पढ़िए।

12 पहाड़ पर लालटेन

मंगलेश डबराल

(जन्म : सन् 1948 ई.)

आठवें दशक के महत्त्वपूर्ण कवि मंगलेश डबराल का जन्म उत्तराखंड के टिहरी जिले के काफलपानी गाँव में हुआ था। वे लम्बे समय तक 'हिन्दी पेट्रियट', 'प्रतिपक्ष', 'पूर्वग्रह', 'जनसत्ता' और 'सहारा समय' जैसे पत्र-पत्रिकाओं में काम करते रहे। नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया से भी जुड़े। उन्होंने अनेक विदेशी कविताओं और उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद किया। अमेरिका, बल्गारिया, मोरीशस, रूस तथा जर्मनी में काव्य-पाठ किए। देश-विदेश की अनेक भाषाओं में उनकी कविताओं के अनुवाद हुए हैं।

मंगलेश डबराल की कविता में आम आदमी के जीनव-संघर्ष की सहज अभिव्यक्ति है, बिना किसी वाद-प्रतिवाद के। कवि की प्रतिबद्धता उस साधारण जन के प्रति है जो जीवन की छोटी-छोटी जरूरतों के लिए चौतरफा लड़ाई लड़ रहा है। उनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं – 'पहाड़ पर लालटेन', 'घर का रास्ता', 'हम जो देखते हैं', 'आवाज भी एक जगह है', 'मुझे दिखा एक मनुष्य'। उनके तीन गद्य संग्रह हैं – 'एक बार आयोवा', 'लेखक की रोटी' और 'कवि का अकेलापन'। कवि को शमशेर सम्मान, पहल सम्मान और साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

प्रस्तुत कविता में पहाड़ के इर्द-गिर्द रहने वाले अभावों से पीड़ित लोगों की बेबसी का बेबाक चित्रण है। इन लोगों में धीरे-धीरे उभर रही विद्रोही चेतना की ओर कविता संकेत करती है। दूर पहाड़ पर जल रही लालटेन धीरे-धीरे एक आग में बदल जाती है, जिसके प्रकाश में अभाव और अज्ञान में डूबे लोगों को अपनी जिन्दगी की सच्ची तसवीर दिखाई देती है। गिरवी रखे खेत, रोती-बिलखती स्त्रियों के उतरते गहने, भूख, बाढ़ और महामारी से तड़पते-मरते लोग उन्हें उस प्रकाश में साफ-साफ दिखाई देते हैं। क्रमश: भूख एक सशक्त पंजे में बदलने लगती है, इच्छाएँ पत्थरों पर अपने दाँत पैने करने लगती हैं। अर्थात् अमानवीय ताकतों के विरुद्ध मानवीय विद्रोह उभरने लगता है। कवि ने अन्याय-अत्याचार के प्रतिकार के लिए विद्रोह को अनिवार्य बताते हुए लालटेन को विद्रोही चेतना के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है।

जंगल में औरतें हैं
लकड़ियों के गट्ठर के नीचे बेहोश
जंगल में बच्चे हैं
असमय दफ़नाये जाते हुए
जंगल में नंगे पैर चलते बूढ़े हैं
डरते-खाँसते अंत में गायब हो जाते हुए
जंगल में लगातार कुल्हाड़ियाँ चल रही हैं
जंगल में सोया है रक्त
धूप में तपती हुई चट्टानों के पीछे

वर्षों के आर्तनाद हैं
और थोड़ी-सी घास है बहुत प्राचीन
पानी में हिलती हुई
अगले मौसम के जबड़े तक पहुँचते पेड़
रातोंरात नंगे होते हैं
सूई की नोक जैसे सन्नाटे में
जली हुई धरती करवट लेती है
और एक विशाल चक्के की तरह घूमता है आसमान

जिसे तुम्हारे पूर्वज लाये थे यहाँ तक
वह पहाड़ दुख की तरह टूटता आता है हर साल
सारे वर्ष सारी सदियाँ
बर्फ़ की तरह जमती हैं निःस्वप्न आँखों में
तुम्हारी आत्मा में
चूल्हों के पास पारिवारिक अंधकार में
बिखरे हैं तुम्हारे लाचार शब्द
अकाल में बटोरे गये दानों जैसे शब्द

दूर एक लालटेन जलती है पहाड़ पर
एक तेज़ आँख की तरह
टिमटिमाती धीरे-धीरे आग बनती हुई
देखो अपने गिरवी रखे हुए खेत
बिलखती स्त्रियों के उतारे गये गहने
देखो भूख से बाढ़ से महामारी से मरे हुए
सारे लोग उभर आये हैं चट्टानों से
दोनों हाथों से बेशुमार बर्फ़ झाड़कर
अपनी भूख को देखो
जो एक मुस्तैद पंजे में बदल रही है
और इच्छाएँ दाँत पैने कर रही हैं
पत्थरों पर

शब्दार्थ-टिप्पणी

आर्तनाद पीड़ा से निकली आवाज़ **बेशुमार** बहुत **मुस्तैद** कटिबद्ध, तेज़

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) औरतें क्यों बेहोश हैं ?

(2) बच्चों को असमय क्यों दफनाया जा रहा है ?

(3) जंगल में कुल्हाड़ियाँ क्यों चल रही हैं ?

(4) कैसा सन्नाटा है ? क्यों ?

(5) लालटेन किस तरह जलती है ?

(6) पहाड़ के ईद-गिर्द रहने वालों की बेबसी का वर्णन कीजिए।

2. उत्तर लिखिए :

(1) महामारी से लोगों की दशा कैसी थी ?

(2) 'पहाड़ पर लालटेन' कविता का केन्द्रीय भाव स्पष्ट कीजिए।

(3) ससंदर्भ समझाइए :

चूल्हों के पास पारिवारिक अंधकार में
बिखरे हैं तुम्हारे लाचार शब्द
अकाल में बटोरे गये दानों जैसे शब्द।

योग्यता-विस्तार

- मंगलेश डबराल की अन्य कविताएँ इंटरनेट के माध्यम से पढ़िए।

•

13 बोलना

अरुण कमल

(जन्म : सन् 1954 ई.)

आठवें दशक के कवि अरुण कमल का जन्म बिहार के रोहतास जिले के नासरीगंज में हुआ था। वे व्यवसाय से अंग्रेजी के अध्यापक हैं। अपने आसपास के परिवेश अर्थात् लोकजीवन और लोक संस्कृति को पूरी ईमानदारी से प्रतिध्वनित करने वाले इस कवि की कविता में जीवन के प्रति गहरी प्रतिबद्धता देखने को मिलती है। उनकी कविता अपने समय के सच का सामना करने वाली कविता है। उनकी भाषा में जनभाषा के रंग हैं और एक आडंबर मुक्त बिम्बधर्मिता है।

'अपनी केवल धार', 'सबूत', 'नये इलाके', 'पुतली में संसार' जैसे काव्य संग्रहों द्वारा उन्होंने समकालीन कविता में अपनी विशेष पहचान बनाई है। 'कविता और समय' तथा 'गोलमेज' उनके चिंतनात्मक-आलोचनात्मक निबंधों के संकलन हैं। हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्रिका 'आलोचना' का संपादन भी उन्होंने किया। 'नये इलाके' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार के अलावा उन्हें भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार, सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार, श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार, रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार तथा शमशेर सम्मान प्राप्त हो चुका है।

प्रस्तुत कविता अधिक बोलने वालों और कम बोलने वालों में से कौन ज्यादा ताकतवर है, इस रहस्य से परदा उठाती है। जो आदमी दु:खी है वह बहुत बोलता है, बकता है और यहाँ तक कि आवेश में आकर ईंट के भट्ठे-सा धधकता है। लेकिन आश्चर्य इस बात का है कि वह कर कुछ नहीं पाता। दूसरी ओर जो जितना ज्यादा सुखी है, ताकतवर है वह लगभग नहीं बोलता, चुप रहता है। वह देखता सब कुछ है और सिर्फ हाथ के इशारे से लोगों को मरवा-कटवा सकता है। बंदूक की घोड़ी दबाए बिना ही वह कोई भी जुल्म ढा सकता है। कवि ने बहुत कम शब्दों में सामाजिक-विषमता की ओर इशारा कर दिया है।

जो आदमी दुख में है

वह बहुत बोलता है

बिना बात के बोलता है

वह कभी चुप्प स्थिर बैठ नहीं सकता

ज़रा-सी हवा लगते फेंकता लपट

बकता है लगातार

ईंट के भट्ठे-सा धधकता

जो सुखी सम्पन्न है

सन्तुष्ट है

वह कम बोलता है

काम की बात बोलता है

जो जितना सुखी है उतना ही कम
बोलता है

जो जितना ताक़तवर है उतना ही कम

वह लगभग नहीं बोलता है

हाथ से इशारा करता है

ताकता है

और चुप्प रहता है

जिसके चलते चल रहा है युद्ध कट रहे हैं लोग

उसने कभी किसी बन्दूक की घोड़ी नहीं दाबी

शब्दार्थ-टिप्पणी

इशारा संकेत **बकना** निरर्थक बोलना **भट्ठा** ईंट पकाने की चिमनी **सम्पन्न** धनी

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कैसा आदमी बहुत बोलता है ?

(2) दु:ख में आदमी किस तरह धधकता है ?

(3) कैसा आदमी कम बोलता है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) दु:खी और सुखी आदमी के बोलने में अन्तर क्या है ? स्पष्ट कीजिए।

(2) ताकतवर आदमी के बोलने की विशेषताएँ बताइए।

(3) दु:खी, सुखी और ताकतवार आदमियों के बोलने का भेद स्पष्ट कीजिए।

(4) बंदूक की घोड़ी न दबाने वाले आदमी की विशेषताएँ क्या हैं ?

(5) 'बोलना' कविता में बोलने के कितने रूपों का वर्णन कवि ने किया है ? अपने शब्दों में समझाइए।

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) ''जो सुखी सम्पन्न है, सन्तुष्ट है
वह कम बोलता है, काम की बात बोलता है।''

(2) ''जिसके चलते चल रहा है युद्ध कट रहे हैं लोग
उसने कभी किसी बन्दूक की घोड़ी नहीं दाबी॥''

योग्यता-विस्तार

- बोलने के बारे में कबीर के दोहे ढूँढ़कर पढ़िए।
- नौकरी के लिए साक्षात्कार में बोलने का क्या महत्त्व है ? इस पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
- वक्तृत्त्व और वाद-विवाद स्पर्धा में कक्षा में बोलने के कौन-कौन से गुण होने चाहिए, खोजकर पढ़िए।

•

14 आदमी को लीलती हैं खानें

मदन कश्यप

(जन्म : सन् 1954 ई.)

मदन कश्यप का जन्म बिहार के वैशाली में एक निम्न मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ था। अल्पायु में ही माँ का निधन हो जाने के कारण ननिहाल में पढ़ाई पूरी की। 1979 में रोजी - रोटी की तलाश में धनबाद आ गए और वहाँ एक दैनिकपत्र से जुड़ गए। बाद में एक सार्वजनिक उपक्रम में बीस वर्षों तक नौकरी कर इस्तीफा देकर सामाजिक-राजनीतिक विषयों पर लिखना शुरू किया। पिछले कुछ वर्षों से दिल्ली में रहकर 'सामाजिक विमर्श' नामक पत्रिका का संपादन कर रहे हैं।

मदन कश्यप एक ऐसे रचनाकार हैं जो सामाजिक - राजनीतिक तथ्यों की जानकारी का कविता में सृजनात्मक रूपांतर करते हैं। बदलते हुए समय और संदर्भों को समझने और व्याख्यायित करने में उन्हें कुशलता प्राप्त है। अब तक उनके तीन कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं - 'लेकिन उदास है पृथ्वी', 'नीम रोशनी में' और 'करुज'। दो निबंध संग्रह हैं - मतभेद, 'लहूलुहान लोक तंत्र'।

प्रस्तुत कविता में कोयले की खानों में जान हथेली पर रख कर काम करने वाले श्रमिकों के फौलादी हौसलों और कठोरतम परिश्रम की यथार्थ तसवीर अंकित है। चट्टानों से भी कठोर अंधेरे को चीरते हुए जब ये श्रमिक अजगर - सी टेढ़ी-मेढ़ी खानों में प्रवेश करते हैं तो किसी को ज्ञान नहीं होता कि कौन वापस लौटकर जाएगा और कौन काल के मुख में समा जाएगा। जो कोयला धरती के गर्भ से बाहर निकल कर दुनिया के नक्शे को बदल देता है, उसे बाहर निकालने वालों के तप एवं बलिदान को शायद ही कोई याद करता है। कोयले की खानों में ही नहीं, कारखानों की भट्ठी में काम करने वाले श्रमिक, धरती फाड़ कर हल चलाने वाला किसान, मिल में कपड़ा बुनने वाला मजदूर - इन सबके लिए सामंतों की प्रशंसा में लिखे गए इतिहास में कोई जगह नहीं होती। कवि का हृदय इस स्थिति से द्रवित हो उठता है।

आदमी को लीलती हैं खानें
ऐसे ही नहीं रतन उड़ेलती है यह रत्नगर्भा
कितनी-कितनी जिंदगियाँ दफ़न हो जाती हैं
इनकी छाती में सेंध लगाते-लगाते

टेढ़े-मेढ़े लेटे विशालकाय अजगर से उनके उदर में
गैंता और सावल जैसे अपने नन्हे औज़ारों के साथ
जब घुसते हैं मज़दूर
तब किसे पता होता है कि कितने वापस आएँगे
और कितने उनके जबड़ों में फँस जाएँगे

आदमी को लीलती हैं खानें
चिनाकुड़ी। चासनाला। भदुआ
चाँपापुर। होरिलाडीह। केन्दुआडीह
किसी के लिए ये महज निरर्थक शब्द हैं
तो किसी के लिए कुछ खानों के नाम
मगर उनके लिए ये क्या हैं
जिनके लाडले दफ़न हो गए इन खानों में

आदमी को लीलती हैं खानें
तब जाकर निकलता है कोयला
आदमी को चूसते हैं कारखाने
तब जाकर ढलता है लोहा

चूहे के बिलों जैसी सँकरी खानों में
पीठ पर लादकर गैंता, सावल और झोरा
अपना रास्ता बनाते हुए प्रवेश करते हैं मज़दूर

वहाँ होती है धरती की सबसे गर्म और भारी हवा
वहाँ होती है सबसे असह्य चिपचिपी उमस
पृथ्वी के गर्भ के सबसे भारी अवयव
चट्टानों से भी कठोर अँधेरे को चीरते हुए
घुटनों के बल सरक-सरक कर वहाँ पहुँचते हैं
मज़दूर

फिर मज़बूत हथेलियों में सँभालकर गैंता
चोट करने से पहले ग़ौर से निहारते हैं
कोयले की गर्भस्थ काली परत को
जिसके पहली बार धरती के गर्भ से बाहर आते ही
बदल गया था दुनिया का नक्शा

धरती की छाती को भेदकर
किसने मारी थी पहली चोट कोयले की सीम पर
किसने धधकाई थी पहली बार लौहसारी
किसने चलाया था पहली बार हल
किसने निकाले थे रुई से धागे
किसने बुने थे पहली बार कपड़े

सम्राटों और सामंतों का इतिहास
गढ़ने और पढ़ने वाले लोगों
बताओ तो सही
किनके फंदों में कसा है
किनके जबड़ों मे फँसा है
इनका इतिहास !

शब्दार्थ-टिप्पणी

लीलना निगलना **सेंध** दीवाल तोड़ कर अन्दर आने का रास्ता बनाना **निरर्थक** बेकार **महज** सिर्फ

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) मजदूरों की जिन्दगी कैसे दफ़न हो जाती है ?

(2) किन औजारों के साथ मजदूर खदानों में जाते हैं ?

(3) कुछ खानों के नाम के साथ माता-पिता भावनात्मक रूप से क्यों जुड़े हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) नन्हें औजारों के साथ प्रवेश करने वाले मजदूरों की मन:स्थिति का वर्णन कीजिए।

(2) कवि ने खदानों की तुलना विशालकाय अजगर से क्यों की है ?

(3) सँकरे खदानों में जाते समय मजदूरों को किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है ?

(4) असह्य मुसीबतों का सामना करते मजदूर खदानों से कोयला निकालने पर मजबूर क्यों हैं ?

(5) 'आदमी को लीलती हैं खानें' शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए।

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) ''किसी के लिए ये महज निरर्थक शब्द हैं
तो किसी के लिए कुछ खानों के नाम
मगर उनके लिए ये क्या हैं
जिनके लाडले दफ़न हो गए इन खानों में।''

(2) ''आदमी को चूसते हैं कारखाने
तब जाकर ढलता है लोहा।''

योग्यता-विस्तार

- इन्टरनेट के माध्यम से खदानों के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त करें।
- धनबाद (झारखंड) में स्थित कोयले की खानों के विषय में पढ़ें।

●

15 फ़र्क

नीलेश रघुवंशी

(जन्म : सन् 1969 ई.)

नई पीढ़ी की महिला - रचनाकार नीलेश रघुवंशी का जन्म मध्य प्रदेश के गंज बासौदा में हुआ था। संकीर्ण नारीवादी लेखन से अलग हटकर भी उन्होंने नारी जीवन की समस्याओं और संभावनाओं को समझने का प्रयास किया है। नारी-मन की उलझन, उसकी पीड़ा तथा संघर्ष को वाचा देने के साथ-साथ स्त्रीत्व के गौरव - गरिमा की अभिव्यक्ति इन की कविता में हुई है। कविता के साथ-साथ गद्य की कई विधाओं में उनका महत्वपूर्ण योगदान है।

'घर-निकासी', 'पानी का स्वाद', 'अंतिम पंक्ति में' उनके काव्य-संग्रह हैं। 'एक कस्बे के नोट्स' उनका उपन्यास है। 'छूटी हुई जगह' (स्त्री - कविता पर नाट्यालेख) 'अभी न होगा मेरा अंत' (निराला पर नाट्य-आलेख) 'ए क्रिएटिव लीजेंड' (सैयद हैदर रजा एवं ब.व.कारंत पर नाट्य-आलेख) उनकी गद्य-कृतियाँ हैं। 'एलिस इन वंडर लैंड', 'डॉन क्विगजोट', 'झाँसी की रानी' उनके बाल नाटक हैं। अबतक उन्हें कई पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं जिनमें-भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार, दुष्यंतकुमार स्मृति सम्मान, केदार सम्मान प्रमुख हैं।

'फर्क' कविता में माँ-बेटी के रिश्ते से जुड़े सूक्ष्म पहलुओं को रेखांकित किया गया है। खाना माँगने के दोनों के तरीकों में बहुत बड़ा अंतर है। बेटी को जब-जब भूख लगती है तब-तब माँ उसे जो-जो माँगती है, स्नेह पूर्वक देती है। बेटी के चिल्लाने-पुकारने पर भी माँ हँसते - दुलारते हुए उसकी माँग पूरी करती है। लेकिन अब माँ बूढ़ी हो चुकी है, लाचार है फिर भी भूख लगने पर चिल्लाती - पुकारती नहीं, बल्कि भूख न होने का स्वांग रचकर सहमी-सी रह जाती है। कवयित्री ने माँ और बेटी के आचरण के विरोधाभास को बहुत कम शब्दों में उजागर कर दिखाया है।

मुझे जब-जब भूख लगी तब-तब चिल्लाई माँ पर

रोटी दो दूध दो यह नहीं मीठावाला दो

ऐसा नहीं वैसा दो कैसा भी मत दो

माँ ने हँसते-दुलारते वही दिया जो चाहिए था मुझे

अब जब माँ को ठीक से दिखता भी नहीं

तब भूखी होते हुए भी भूख न होने का उपक्रम करती

बार-बार पेट को पल्लू से ढकती

कभी भी चिल्लाकर चाय रोटी नहीं माँगती माँ

कितना फर्क है माँ खाना दो और बेटा खाना दो में

शब्दार्थ-टिप्पणी

पल्लू आँचल **फ़र्क** भेद **उपक्रम** कोशिश प्रयास

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवयित्री माँ पर कब चिल्लाती है ?

(2) कवयित्री भूख लगने पर माँ से क्या - क्या माँगती है ?

(3) माँ कवयित्री को क्या देती है ?

(4) माँ पेट को पल्लू से बार-बार क्यों ढकती है ?

(5) भूख न होने का उपक्रम माँ किस हालत में करती है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) माँ द्वारा बच्चों को खाना देने में और बेटों द्वारा माँ को खाना देने में क्या अन्तर है ?

(2) बेटी (कवयित्री) के प्रति माँ के व्यवहार का वर्णन कीजिए।

योग्यता-विस्तार

- ''मा बापने भुलशो नहि'' गुजराती काव्य का समूह गान कीजिए।
- भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' और उषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी पढ़िए।

•

1 पूस की रात

प्रेमचंद

(जन्म : सन् 1880 ई. ; निधन : सन् 1936 ई.)

युग प्रवर्तक साहित्यकार मुंशी प्रेमचंदजी का जन्म बनारस के निकट लमही नामक गाँव में हुआ था। बचपन का नाम धनपतराय था। पाँच वर्ष की उम्र में माता का और चौदह वर्ष की उम्र में पिता का अवसान हो जाने के कारण अनेक अभावों के बीच जिन्दगी की लड़ाई उन्होंने अकेले ही लड़ी। स्वाधीनता आंदोलन में शरीक होने के कारण उन्होंने सरकारी नौकरी तक छोड़ दी और अपना पूरा समय लेखन के लिए समर्पित कर दिया।

प्रेमचंदजी ने एक दर्जन से भी अधिक उपन्यास और तीन सौ से भी अधिक कहानियाँ लिखकर हिन्दी कथा साहित्य को एक नई दिशा दी। वे स्वयं गाँव में जन्मे और पले-बढ़े थे अत: भारतीय ग्राम जीवन के सुख-दु:ख, शोषण उत्पीड़न की यथार्थ तसवीर अपनी कथाकृतियों में अंकित करने में सफल हुए। भारतीय जन-जीवन की प्राय: सभी समस्याओं का संवेदनापूर्ण चित्रण उनकी कृतियों में हुआ है, इसलिए उन्हें समस्यामूलक कथाकार कहा गया। उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में संकलित हैं। सेवासदन, प्रेमाश्रम, कर्मभूमि, रंगभूमि, निर्मला, ग़बन और गोदान उनके प्रमुख उपन्यास है। उनकी भाषा पात्र, प्रसंग और परिवेश के अनुसार सरल-सहज एवं मुहावरेदार होती है।

'पूस की रात' प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है। इसमें कर्ज से पीड़ित हल्कू नामक किसान की दुर्दशा का चित्रण है। मजदूरी कर-कर के बचाये गए तीन रुपए महाजन को जबरन दे देने के बाद हल्कू का कंबल लेने का सपना चूर-चूर हो जाता है। पूस की रात में फटे कंबल में ठिठुरता हुआ वह खेत में फसल की रखवाली करने जाता है। भयानक शीत में वह पहले अपने कुत्ते को सीने से चिपटाकर सोने की व्यर्थ कोशिश करता है, बाद में खेत में से पत्तियाँ एकत्र कर उन्हें जलाकर तापने लगता है। आग की गर्माहट से मिला सुकून उस पर इतना हावी हो जाता है कि यह जानकर भी कि जानवर उसका खेत चर रहे हैं, वह उन्हें भगाने के लिए नहीं जाता। फसल चौपट हो जाने के कारण उसे कर्ज भी मजदूरी करके चुकाना पड़ेगा, यह जानते हुए भी वह खुश है। क्योंकि अब उसे जाड़े की रात में ठिठुरते हुए खेतों की रखवाली के लिए जाना नहीं पड़ेगा। हल्कू के माध्यम से भारतीय किसानों की ट्रेजेडी का यथार्थ चित्रण इस कहानी में हुआ है।

: 1 :

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा — ''सहना आया है, लाओ, जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।''

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिरकर बोली — ''तीन ही तो रुपये हैं; दे दोगे तो कम्बल कहाँ से आयेगा ? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी ? उससे कह दो, फसल पर रुपये दे देंगे। अभी नहीं हैं।''

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूस सिर पर आ गया, कम्बल के बिना हार में रात को वह किसी तरह नहीं सो सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमाएगा, गालियाँ देगा। बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ वह अपना भारी-भरकम डील लिए हुए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था) स्त्री के समीप गया और खुशामद करके बोला — ''ला, दे दे, गला तो छूटे। कम्बल के लिए दूसरा उपाय सोचूँगा।''

मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आँखें तरेरती हुई बोली — ''कर चुके दूसरा उपाय ! जरा सुनूँ, कौन उपाय करोगे ? कोई खैरात दे देगा कम्बल ! न जाने कितनी बाकी है जो किसी तरह चुकने में ही नहीं आती। मैं कहती हूँ तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते ? मर-मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है।

पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आए, मैं रुपये न दूँगी – न दूँगी।''

हल्कू उदास होकर बोला–''तो क्या गाली खाऊँ?''

मुन्नी ने तड़पकर कहा–''गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है?''

मगर यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौंहें ढीली पड़ गई। हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, वह मानो एक भीषण जन्तु की भाँति उसे घूर रहा था।

उसने जाकर आले पर से रुपये निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए। फिर बोली — ''तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है, मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर से धौंस !''

हल्कू ने रुपये लिए और इस तरह बाहर चला मानो अपना हृदय निकाल कर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-कपट कर तीन रुपये कम्बल के लिए जमा किए थे। वे आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

: 2 :

पूस की अँधेरी रात ! आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत के किनारे ईख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़ा काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था। दोनों में से एक को भी नींद न आती थी।

हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपटाते कहा — ''क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेटा रह, तू यहाँ क्या लेने आया था? अब खाओ ठंड; मैं क्या करूँ ? जानते थे, मैं यहाँ हलुआ-पूरी खाने आ रहा हूँ, दौड़े दौड़े आगे-आगे चले आए। अब रोओ नानी के नाम को !''

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलाई और अपनी कूँ-कूँ को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया। उसकी श्वान-बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूँ-कूँ से नींद नहीं आ रही है।

हल्कू ने हाथ निकालकर जबरा की ठंडी पीठ सहलाते हुए कहा — ''कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठंडे हो जाओगे। यह राँड़ पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिए आ रही है। उठूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह तो रात कटे। आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मजा है ! और एक-एक भागवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाए तो गर्मी से घबराकर भागे। मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्बल। मजाल है, जाड़े की गुजर हो जाए। तकदीर की खूबी है। मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें।''

हल्कू उठा और गड्ढे में से जरा-सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा — ''पिएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ, मन जरा बहल जाता है।''

जबरा ने उसके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा।

हल्कू — ''आज और जाड़ा खा ले। कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।''

जबरा ने अगले पंजे उसके घुटने पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गरम साँस लगी।

चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और यह निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो, अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कम्पन होने लगा। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था।

जब किसी तरह न रहा गया, तो उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला लिया। कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गन्ध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद से चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीने-भर से उसे न मिला था। जबरा शायद यह समझ रहा था कि स्वर्ग यहीं है और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गन्ध तक न थी। अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता। वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया था। नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई। इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठंडे झोंकों को तुच्छ समझती थी। वह झटपट उठा ओर छपरी के बाहर आकर भौंकने लगा। हल्कू ने उसे कई बार पुचकार कर बुलाया; पर वह उसके पास न आया। हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भौंकता रहा। एक क्षण के लिए आ भी जाता, तो तुरन्त ही फिर दौड़ता। कर्तव्य उसके हृदय में अरमान की तरह उछल रहा था।

: 3 :

एक घंटा और गुज़र गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू उठ बैठा और उसने दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया। फिर भी ठंड कम न हुई। ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रहा है। उसने झुककर आकाश की ओर देखा-अभी कितनी रात बाकी है ! सप्तर्षि आकाश में अभी आधे भी नहीं चढ़े। ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सवेरा होगा। अभी पहर-भर से ऊपर रात है।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरू हो गया था। बाग में पत्तियों का एक ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, ''चलकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे तो समझे कोई भूत है। कौन जाने कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो मुझसे बैठे नहीं रहा जाता।''

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिए बगीचे की तरफ चला। जबरा ने उसे जाते देखा तो पास आया और दुम हिलाने लगा।

हल्कू ने कहा — ''अब तो नहीं रहा जाता जबरू ! चलो, बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें। टाँटे हो जाएँगे, तो फिर आकर सोएँगे। अभी तो रात बहुत है।''

जबरा ने कूँ-कूँ करके सहमति प्रकट की और आगे-आगे बगीचे की ओर चला। बगीचे में घुप अँधेरा छाया हुआ था और उस अन्धकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूँदें टप-टप नीचे टपक रही थीं।

एकाएक एक झोंका मेहँदी के फूलों की खुशबू लिए हुए आया।

हल्कू ने कहा — ''कैसी अच्छी महक आई जबरू ! तुम्हारी नाक में भी सुगन्ध आ रही है ?''

जबरा को कहीं जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी। वह उसे निचोड़ रहा था।

हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया। हाथ ठिठुरे जाते थे, नंगे पाँव गले जाते थे और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था। इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा।

थोड़ी देर में अलाव जल उठी। उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर जलने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे मानो उस अथाह अन्धकार को अपने सिरों पर सँभाले हुए हों। अन्धकार के उस अनन्त सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता-मचलता हुआ जान पड़ता था।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली और दोनों पाँव फैला दिए, मानो ठंड को ललकार रहा हो, ''तेरे जी में जो आए सो कर।'' ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था।

उसने जबरा से कहा — ''क्यों जब्बर, अब तो ठंड नहीं लग रही है ?''

जब्बर ने कूँ-कूँ करके मानो कहा — ''अब क्या ठंड लगती ही रहेगी ?''

''पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं तो इतनी ठण्ड क्यों खाते ?''

जब्बर ने पूँछ हिलाई।

''अच्छा आओ, इस अलाव को कूदकर पार करें, देखें कौन निकल जाता है ! अगर जल गए बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा।''

जब्बर ने उस अग्निराशि की ओर कातर नेत्रों से देखा।

''मुन्नी से कल न कह देना, नहीं तो लड़ाई करेगी।''

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया! पैरों में जरा लपटें लगीं; पर वह कोई बात न थी। जबरा आग के गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ।

हल्कू ने कहा — ''चलो-चलो, ऐसे नहीं, ऊपर से कूदकर आओ।'' वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

: 4 :

पत्तियाँ जल चुकी थीं। बगीचे में फिर अँधेरा छाया हुआ था। राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा दहक उठती थी; पर एक क्षण में फिर आँखें बन्द कर लेती थीं।

हल्कू ने सिर से चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गर्मी आ गई थी; पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था।

जबरा जोर से भौंककर खेत की ओर भागा। हल्कू को ऐसा मालूम हो रहा था कि जानवरों का झुण्ड उसके खेत में आया है। शायद नील गायों का झुण्ड था। उनके कूदने और दौड़ने की आवाजें साफ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि वे खेत में चर रही हैं। उनके चरने की आवाज चर-चर सुनाई देने लगी।

उसने दिल में कहा — ''नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता। नोच ही डाले। मुझे भ्रम हो रहा है। कहाँ, अब तो कुछ नहीं सुनाई देता। मुझे भी कैसा धोखा हुआ है।''

उसने जोर से आवाज लगाई — ''जबरा, जबरा !''

जबरा भौंकता रहा। उसके पास न आया।

फिर खेत के चरे जाने की आवाज सुनाई दी। वह अब अपने को धोखा न दे सका। उसे अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था। कैसे दंदाया हुआ बैठा था, ऐसे जाड़े-पाले में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असूझ जान पड़ा। वह अपनी जगह से न हिला।

उसने जोर से आवाज लगाई — ''लिहो-लिहो लिहो!!''

जबरा फिर भौंक उठा। जानवर खेत चर रहे थे। फसल तैयार है। कैसी अच्छी फसल है, पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं।

हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला; पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा, चुभने वाला, बिच्छू के डंक-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठण्डी देह गरमाने लगा।

जबरा अपना गला फाड़े डालता था। नीलगायें खेत का सफाया किए डालती थीं और हल्कू गरम राख के पास शांत बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों ओर से जकड़ रखा था।

उसी राख के पास गरम जमीन पर वह चादर ओढ़कर सो गया।

सवेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गई थी और मुन्नी कह रही थी — ''आज क्या सोते ही रहोगे ? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया।''

हल्कू ने उठकर कहा — ''क्या तू खेत से होकर आ रही है ?''

मुन्नी बोली — ''हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला ऐसा भी कोई सोता है ? तुम्हारे यहाँ मड़ैया डालने से क्या हुआ ?''

हल्कू ने ऐसा बहाना किया — ''मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है। पेट में ऐसा दर्द हुआ कि मैं ही जानता हूँ।''

दोनों फिर खेत के डाँड़ पर आए। देखा, सारा खेत रौंदा हुआ पड़ा है और जबरा मड़ैया के नीचे चित्त लेटा है, मानो प्राण ही न हों।

दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छाई थी, पर हल्कू प्रसन्न था।

मुन्नी ने चिंतित होकर कहा — ''अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी।''

हल्कू ने प्रसन्न-मुख से कहा — ''रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।''

शब्दार्थ-टिप्पणी

फिरकर घूमकर **हार** खलिहान **डील** कद **खैरात** दान **धौंस** धमकी **ईख** गन्ना **पुआल** पके हुए धान के डंठल जिनसे दाने अलगकर लिए गए हों **श्वान** कुत्ता **राँड़** विधवा **पछुवा** पश्चिम दिशा से चलने वाली हवा **लिहाफ** रजाई **टाँटे** गरम **अलाव** तापने के लिए जलाई गई आग **दंदाया हुआ** गरमाया हुआ **मड़ैया** खेत में रखवाली के लिए बनाया गया झोपड़ा **डाँड़** खेत की सीमा, मेंड़ **मालगुजारी** भूमिकर

मुहावरे

गला छुड़ाना मुक्ति पाना **बला सिर से टलना** मुसीबत दूर होना **आँख तरेरना** क्रोध करना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) सहना के आने से हल्कू चिन्तित क्यों हो गया ?

(2) हल्कू की पत्नी ने पैसे देने से इन्कार क्यों किया ?

(3) रुपये देते समय हल्कू का हृदय व्यथित क्यों था ?

(4) हल्कू और जबरा दोनों को हार में नींद क्यों नहीं आ रही थी ?

(5) हल्कू जबरा को किन शब्दों में प्रेम से डाँटता है ?

(6) जबरा की पीठ सहलाते हुए हल्कू ने क्या कहा?

(7) ठंड से बचने के कौन - कौन से उपाय हल्कू ने किए?

(8) अचानक जबरा खेत की ओर क्यों भागा?

2. उत्तर लिखिए :

(1) मुन्नी हल्कू को खेती करने से मना क्यों करती है?

(2) हल्कू अलाव के सामने बैठकर किस अनुभूति से आनंदित हो रहा था?

(3) हल्कू के खेत की फसल क्यों और कैसे नष्ट हो गई?

(4) अकर्मण्यता की रस्सियों से जकड़ा हल्कू सब देखता-सुनता रहा क्यों?

(5) एक रात हल्कू के विचारों को परिवर्तित करने में समर्थ है - समझाइए।

(6) हल्कू के माध्यम से भारतीय किसान की दयनीय दशा का वर्णन कीजिए।

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) ''एक - एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।''

(2) ''हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी।''

4. मुहावरों का अर्थ लिखकर वाक्य प्रयोग कीजिए :

(1) बला सिर से टलना

(2) आँख तरेरना

5. संधि विच्छेद कीजिए :

सप्तर्षि, दुर्गन्ध, निश्चय

योग्यता-विस्तार

(1) आज का किसान दयनीय और असहाय है - इस विषय पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

(2) जानवर और मनुष्य के प्रेम से संबंधित अन्य कहानियाँ पढ़िए।

●

2 नाखून क्यों बढ़ते हैं ?

पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी

(जन्म : सन् 1907 ई. ; निधन : सन् 1979 ई.)

द्विवेदीजी का जन्म उत्तरप्रदेश के बलिया जिले के दुबे का छपरा नामक गाँव में हुआ था। उनके व्यक्तित्व के कई पहलू हैं। उन्होंने काशी में साहित्य, ज्योतिष और संस्कृत का अध्ययन कर आचार्य की उपाधि प्राप्त की थी। उन्होंने बनारस तथा पंजाब विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। वे शांतिनिकेतन के हिन्दी भवन के निदेशक भी रहे। उनके समग्र साहित्य पर इतिहास, संस्कृति एवं दर्शन के गहन अध्ययन की छाप है।

द्विवेदीजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। वे शुक्लोत्तर युग के एक श्रेष्ठ निबंधकार, उपन्यासकार, समालोचक, इतिहास-लेखक और प्रखर शोधार्थी के रूप में जाने जाते हैं। अशोक के फूल, कल्पलता, विचार प्रवाह और कुटज उनके निबंध संग्रह हैं। बाणभट्ट की आत्मकथा, अनामदास का पोथा, पुनर्नवा तथा चारुचंद्रलेख उनके महत्त्वपूर्ण उपन्यास हैं। 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' तथा 'कबीर' इतिहास और आलोचना विषयक उत्कृष्ट ग्रंथ हैं। पांडित्य और सहजता, गांभीर्य और विनोदप्रियता, प्राचीनता और नवीनता, प्रकृति एवं संस्कृति का अद्‌भुत समन्वय उनके निबंधों एवं उपन्यासों में देखा जा सकता है। ललित निबंधकार के रूप में उनकी स्वतंत्र पहचान है।

'नाखून क्यों बढ़ते हैं ?' एक विचार प्रधान किंतु रोचक निबंध है। निबंध-लेखन की प्रेरणा लेखक को अपनी छोटी बेटी के एक बाल-सहज प्रश्न से मिली कि मनुष्य के नाखून क्यों बढ़ते हैं। नाखून बढ़ते हैं, हम उन्हें काट देते हैं और वे फिर बढ़ जाते हैं। विचार करते-करते लेखक की दृष्टि मनुष्य के लाखों - हजारों वर्ष के इतिहास पर पहुँच जाती है। मनुष्य जब जंगली जीवन जीता था, नाखून ही अस्त्र-शस्त्र के रूप में उसकी सुरक्षा करते थे। जब सुरक्षा के लिए उसने नये-नये शस्त्र बना लिए तब अपनी कला एवं विनोद वृत्ति से प्रेरित हो नाखूनों को सजाना सँवारना शुरू कर दिया। सोच-विचार कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि नाखूनों का बढ़ना हमारी पशुता की निशानी है और उन्हें काट देना हमारी सभ्यता-संस्कृति की निशानी है। लेकिन इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि नाखूनों को काट देने मात्र से मनुष्य सभ्य नहीं बन जाता, अपने भीतर की पशुता पर विजय पाकर ही वह पूर्ण सभ्य और सुसंस्कृत कहलाता है।

बच्चे कभी-कभी चक्कर में डाल देने वाले प्रश्न कर बैठते हैं। अल्पज्ञ पिता बड़ा दयनीय जीव होता है। मेरी छोटी लड़की ने जब उस दिन पूछ दिया कि आदमी के नाखून क्यों बढ़ते हैं, तो मैं कुछ सोच ही नहीं सका। हर तीसरे दिन नाखून बढ़ जाते हैं, बच्चे कुछ दिन तक अगर उन्हें बढ़ने दें, तो माँ-बाप अक्सर उन्हें डाँटा करते हैं। पर कोई नहीं जानता कि ये अभागे नाखून क्यों इस प्रकार बढ़ा करते हैं। काट दीजिए, वे चुपचाप दण्ड स्वीकार कर लेंगे; पर निर्लज्ज अपराधी की भाँति फिर छूटते ही सेंध पर हाजिर ! आखिर ये इतने बेहया क्यों हैं ?

कुछ लाख़ ही वर्षों की बात है, जब मनुष्य जंगली था; वनमानुष जैसा। उसे नाखून की जरूरत थी। उसकी जीवन-रक्षा के लिए नाखून बहुत जरूरी थे। असल में वही उसके अस्त्र थे। दाँत भी थे, पर नाखून के बाद ही उनका स्थान था। उन दिनों उसे जूझना पड़ता था, प्रतिद्वन्दियों को पछाड़ना पड़ता था, नाखून उसके लिए आवश्यक अंग थे। फिर धीरे-धीरे वह अपने अंग से बाहर की वस्तुओं का सहारा लेने लगा। पत्थर के ढेले और पेड़ की डालें काम में लाने लगा (रामचन्द्र जी की वानरी सेना के पास ऐसे ही अस्त्र थे)। उसने हड्डियों के भी हथियार बनाये। इन हड्डी के हथियारों में सबसे मजबूत और सबसे ऐतिहासिक था देवताओं के राजा का वज्र, जो दधीचि मुनि की हड्डियों से बना था। मनुष्य और आगे बढ़ा। उसने धातु के हथियार बनाये। जिनके पास लोहे के शस्त्र और अस्त्र थे, वे विजयी हुए। देवताओं के राजा तक को मनुष्यों के राजा से इसलिए सहायता लेनी पड़ती थी कि मनुष्यों के राजा के पास लोहे के अस्त्र थे। असुरों के पास अनेक विद्याएँ थीं, पर लोहे के अस्त्र नहीं थे, शायद घोड़े भी नहीं थे। आर्यों के पास ये दोनों चीजें थीं। आर्य विजयी हुए। फिर इतिहास अपनी गति से बढ़ता गया। नाग हारे, सुपर्ण हारे, यक्ष हारे, गन्धर्व हारे, असुर हारे, राक्षस हारे। लोहे के अस्त्रों ने बाजी मार ली। इतिहास आगे बढ़ा। पलीते-वाली बन्दूकों

ने, कारतूसों ने, तोपों ने, बमों ने, बमवर्षक वायुयानों ने इतिहास को किस कीचड़-भरे घाट तक घसीटा है; यह सबको मालूम है। नख-धर मनुष्य अब एटम-बम पर भरोसा करके आगे की ओर चल पड़ा है। पर उसके नाखून अब भी बढ़ रहे हैं। अब भी प्रकृति मनुष्य को उसके भीतरवाले अस्त्र से वञ्चित नहीं कर रही है, अब भी वह याद दिला देती है कि तुम्हारे नाखून को भुलाया नहीं जा सकता। तुम वही लाख वर्ष पहले के नख-दन्तावलम्बी जीव हो - पशु के साथ एक ही सतह पर विचरने वाले और चरने वाले।

ततः किम् ! मैं हैरान होकर सोचता हूँ कि मनुष्य आज अपने बच्चों को नाखून न काटने के लिए डाँटता है। किसी दिन-कुछ थोड़े लाख वर्ष पूर्व वह अपने बच्चों को नाखून नष्ट करने पर डाँटता रहा होगा। लेकिन प्रकृति है कि वह अब भी नाखून को जिलाये जा रही है और मनुष्य है कि वह अब भी उसे काटे जा रहा है। वे कम्बख्त रोज बढ़ते हैं, क्योंकि वे अन्धे हैं, नहीं जानते कि मनुष्य को इससे कोटि-कोटि गुना शक्तिशाली अस्त्र मिल चुका है ! मुझे ऐसा लगता है कि मनुष्य अब नाखून को नहीं चाहता। उसके भीतर बर्बर-युग का कोई अवशेष रह जाय, यह उसे असह्य है। लेकिन यह भी कैसे कहूँ ! नाखून कटने से क्या होता है? मनुष्य की बर्बरता घटी कहाँ है, वह तो बढ़ती जा रही है ! मनुष्य के इतिहास में हिरोशिमा का हत्याकाण्ड बार-बार थोड़े ही हुआ है? यह तो उसका नवीनतम रूप है ! मैं मनुष्य के नाखून की ओर देखता हूँ, तो कभी-कभी निराश हो जाता हूँ। ये उसकी भयंकर पाशवी वृत्ति के जीवन्त प्रतीक हैं। मनुष्य की पशुता को जितनी बार भी काट दो, वह मरना नहीं जानती।

कुछ हजार साल पहले मनुष्य ने नाखून को सुकुमार विनोदों के लिए उपयोग में लाना शुरू किया था। वात्स्यायन के 'कामसूत्र' से पता चलता है कि आज से दो हजार वर्ष पहले का भारतवासी नाखूनों को जम के सँवारता था। उनके काटने की कला काफी मनोरंजक बतायी गयी है। त्रिकोण, वर्तुलाकार, चन्द्राकार, दन्तुल आदि विविध आकृतियों के नाखून उन दिनों विलास नागरिकों के न जाने किस काम आया करते थे। उनको सिक्थक (मोम) और अलक्तक (आलता) से यत्नपूर्वक रगड़कर लाल और चिकना बनाया जाता था। गौड़ देश के लोग उन दिनों बड़े-बड़े नखों को पसन्द करते थे और दाक्षिणात्य लोग छोटे नखों को। अपनी-अपनी रुचि है, देश की भी और काल की भी ! लेकिन समस्त उद्योगामिनी वृत्तियों को और नीचे खींचनेवाली वस्तुओं को भारतवर्ष ने मनुष्योचित बनाया है, यह बात चाहूँ भी तो भूल नहीं सकता।

मानव-शरीर का अध्ययन करनेवाले प्राणि-विज्ञानियों का निश्चित मत है कि मानव-चित्त की भाँति मानव-शरीर में भी बहुत-सी अभ्यासजन्य सहज वृत्तियाँ रह गयी हैं। दीर्घकाल तक उनकी आवश्यकता रही है। अतएव शरीर ने अपने भीतर एक ऐसा गुण पैदा कर लिया है कि वे वृत्तियाँ अनायास ही, और शरीर के अनजान में भी, अपने-आप काम करती हैं। नाखून का बढ़ना उसमें से एक है, केश का बढ़ना दूसरा है, दाँत का दुबारा उठना तीसरा है, पलकों का गिरना चौथा है। और असल में सहजात वृत्तियाँ अनजान की स्मृतियों को ही कहते हैं। हमारी भाषा में भी इसके उदाहरण मिलते हैं। अगर आदमी अपने शरीर की, मन की और वाक् की अनायास घटनेवाली वृत्तियों के विषय में विचार करे, तो उसे अपनी वास्तविक प्रवृत्ति पहचानने में बहुत सहायता मिले। पर कौन सोचता है? सोचना तो क्या, उसे इतना भी पता नहीं चलता कि उसके भीतर नख बढ़ा लेने की जो सहजात वृत्ति है, वह उसके पशुत्व का प्रमाण है। उन्हें काटने की जो प्रवृत्ति है, वह उसकी मनुष्यता की निशानी है और यद्यपि पशुत्व के चिह्न उसके भीतर रह गये हैं, पर वह पशुत्व को छोड़ चुका है। पशु बनकर वह आगे नहीं बढ़ सकता। उसे कोई और रास्ता खोजना चाहिए। अस्त्र बढ़ाने की प्रवृत्ति मनुष्यता की विरोधिनी है।

मेरा मन पूछता है — किस ओर ? मनुष्य किस ओर बढ़ रहा है? पशुता की ओर या मनुष्यता की ओर? अस्त्र बढ़ाने की ओर या अस्त्र काटने की ओर मेरी निर्बोध बालिका ने मानो मनुष्य-जाति से ही प्रश्न किया है — जानते हो, नाखून क्यों बढ़ते हैं? यह हमारी पशुता के अवशेष हैं। मैं भी पूछता हूँ — जानते हो, ये अस्त्र-शस्त्र क्यों बढ़ रहे हैं?-ये हमारी पशुता की निशानी हैं। भारतीय भाषाओं में प्रायः ही अंग्रेजी के 'इण्डिपेण्डेन्स' शब्द का समानार्थक शब्द नहीं व्यवहृत होता। 15 अगस्त को जब अंग्रेजी भाषा के पत्र 'इण्डिपेण्डेन्स' की घोषणा कर रहे थे, देशी भाषा के पत्र 'स्वाधीनता दिवस' की चर्चा कर रहे थे। 'इण्डिपेण्डेन्स' का अर्थ है अनधीनता या किसी की अधीनता का अभाव, पर 'स्वाधीनता' शब्द का अर्थ है अपने ही अधीन रहना। अंग्रेजी में कहना हो, तो 'सेल्फडिपेण्डेन्स' कह सकते हैं। मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि इतने दिनों तक अंग्रेजी की अनुवर्त्तिता करने के बाद भी भारतवर्ष 'इण्डिपेण्डेन्स' को अनधीनता क्यों नहीं कह सका? उसने अपनी आजादी के जितने भी नामकरण किये—स्वतन्त्रता, स्वराज्य, स्वाधीनता—उन सबमें 'स्व' का बन्धन अवश्य रखा। यह क्या संयोग की बात है या हमारी समूची परम्परा ही अनजान में हमारी

भाषा के द्वारा प्रकट होती रही है ? मुझे प्राणी-विज्ञानी की बात फिर याद आती है — सहजात वृत्ति अनजानी स्मृतियों का ही नाम है। स्वराज होने के बाद स्वभावत: ही हमारे नेता और विचारशील नागरिक सोचने लगे हैं कि इस देश को सच्चे अर्थ में सुखी कैसे बनाया जाय। हमारे देश के लोग पहली बार यह सब सोचने लगे हों, ऐसी बात नहीं है। हमारा इतिहास बहुत पुराना है, हमारे शास्त्रों में इस समस्या को नाना भावों और नाना पहलुओं से विचारा गया है। हम कोई नौसिखुए नहीं हैं, जो रातों-रात अनजान जंगल में पहुँचाकर अरक्षित छोड़ दिये गये हों। हमारी परम्परा महिमामयी, उत्तराधिकार विपुल और संस्कार उज्जवल हैं। हमारे अनजान में भी ये बातें हमें एक खास दिशा में सोचने की प्रेरणा देती है। यह जरूर है कि परिस्थितियाँ बदल गयी हैं। उपकरण नये हो गये हैं और उलझनों की मात्रा भी बहुत बढ़ गयी है, पर मूल समस्याएँ बहुत अधिक नहीं बदली हैं। भारतीय चित्त जो आज भी अनधीनता के रूप में न सोचकर 'स्वाधीनता' के रूप में सोचता है, वह हमारे दीर्घकालीन संस्कारों का फ़ल है। वह 'स्व' के बन्धन को आसानी से नहीं छोड़ सकता। अपने आप पर अपने आपके द्वारा लगाया हुआ बन्धन हमारी संस्कृति की बड़ी भारी विशेषता है। मैं ऐसा तो नहीं मानता कि जो कुछ हमारा पुराना है, जो कुछ हमारा विशेष है, उससे हम चिपटे ही रहें। पुराने का 'मोह' सब समय वान्छनीय ही नहीं होता। मरे बच्चे को गोद में दबाये रहनेवाली 'बंदरिया' मनुष्य का आदर्श नहीं बन सकती। परन्तु मैं ऐसा भी नहीं सोच सकता कि हम नयी अनुसन्धित्सा के नशे में चूर होकर अपना सरबस खो दें। कालिदास ने कहा था कि सब पुराने अच्छे नहीं होते, सब नये खराब ही नहीं होते। भले लोग दोनों की जाँच कर लेते हैं, जो हितकर होता है उसे ग्रहण करते हैं, और मूढ़ लोग दूसरों के इशारे पर भटकते रहते हैं। सो, हमें परीक्षा करके हितकर बात सोच लेनी होगी और अगर हमारे पूर्वसंचित भण्डार में वह हितकर वस्तु निकल आये, तो इससे बढ़कर और क्या हो सकता है ?

जातियाँ इस देश में अनेक आयी हैं। लड़ती-झगड़ती भी रही हैं, फिर प्रेम-पूर्वक बस भी गयी हैं। सभ्यता की नाना सीढ़ियों पर खड़ी और नाना ओर मुख करके चलनेवाली इन जातियों के लिए एक सामान्य धर्म खोज निकालना कोई सहज बात नहीं थी। भारतवर्ष के ऋषियों ने अनेक प्रकार से इस समस्या को सुलझाने की कोशिश की थी। पर एक बात उन्होंने लक्ष्य की थी। समस्त वर्णों और समस्त जातियों का एक सामान्य आदर्श भी है। वह है अपने ही बन्धनों से अपने को बाँधना। मनुष्य पशु से किस बात में भिन्न है ! आहार-निद्रा आदि पशु-सुलभ स्वभाव उसके ठीक वैसे ही हैं, जैसे अन्य प्राणियों के। लेकिन वह फिर भी पशु से भिन्न है। उसमें संयम है, दूसरे के सुख-दु:ख के प्रति संवेदना है, श्रद्धा है, तप है, त्याग है। यह मनुष्य के स्वयं के उद्भावित बन्धन हैं। इसीलिए मनुष्य झगड़े-टण्टे को अपना आदर्श नहीं मानता, गुस्से में आकर चढ़ दौड़नेवाले अविवेकी को बुरा समझता है; और वचन, मन और शरीर से किए गए असत्याचरण को गलत आचरण मानता है। यह किसी भी जाति या वर्ण या समुदाय का धर्म नहीं है। यह मनुष्यमात्र का धर्म है। महाभारत में इसीलिए निर्वैर भाव, सत्य और अक्रोध को सब वर्णों का सामान्य धर्म कहा है :

एतद्धि त्रितयं श्रेष्ठं सर्वभूतेषु भारत।
निर्वैरता महाराज सत्यमक्रोध एव च॥

अन्यत्र इसमें निरन्तर दानशीलता को भी गिनाया गया है (अनुशासन प., 120.10)। गौतम ने ठीक ही कहा था कि मनुष्य की मनुष्यता यही है कि वह सबके दु:ख-सुख को सहानुभूति के साथ देखता है। यह आत्म-निर्मित बन्धन ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है। अहिंसा, सत्य और अक्रोधमूलक धर्म का मूल उत्स यही है। मुझे आश्चर्य होता है कि अनजान में भी हमारी भाषा में यह भाव कैसे रह गया है। लेकिन मुझे नाखून के बढ़ने पर आश्चर्य हुआ था। अज्ञान सर्वत्र आदमी को पछाड़ता है, और आदमी है कि सदा उससे लोहा लेने को कमर कसे है।

मनुष्य को सुख कैसे मिलगा ? बड़े-बड़े नेता कहते हैं, वस्तुओं की कमी है, और मशीन बैठाओ, और उत्पादन बढ़ाओ, और धन की वृद्धि करो, और बाह्य उपकरणों की ताकत बढ़ाओ। एक बूढ़ा था। उसने कहा था—बाहर नहीं, भीतर की ओर देखो। हिंसा को मन से दूर करो, मिथ्या को हटाओ, क्रोध और द्वेष को दूर करो, लोक के लिए कष्ट सहो, आराम की बात मत सोचो, प्रेम की बात सोचो; आत्म-तोषण की बात सोचो, काम करने की बात सोचो। उसने कहा—प्रेम ही बड़ी चीज है, क्योंकि वह हमारे भीतर है। उच्छृंखलता पशु की प्रवृति है, 'स्व' का बन्धन मनुष्य का स्वाभाव है। बूढ़े की बात अच्छी लगी या नहीं, पता नहीं। उसे गोली मार दी गयी; आदमी के नाखून बढ़ने की प्रवृति ही हावी हुई। मैं हैरान होकर सोचता हूँ—बूढ़े ने कितनी गहराई में पैठकर मनुष्य की वास्तविक चरितार्थता का पता लगाया था।

ऐसा कोई दिन आ सकता है, जबकि मनुष्य के नाखनों का बढ़ना बन्द हो जाएगा। प्राणिशास्त्रियों का ऐसा अनुमान है कि मनुष्य का अनावश्यक अंग उसी प्रकार झड़ जाएगा, जिस प्रकार उसकी पूँछ झड़ गयी है। उस दिन मनुष्य की पशुता भी लुप्त हो जाएगी। शायद उस दिन वह मारणास्त्रों का प्रयोग भी बन्द कर देगा। तब तक इस बात से छोटे बच्चों को परिचित करा देना वांच्छनीय जान पड़ता है कि नाखून का बढ़ना मनुष्य के भीतर की पशुता की निशानी है और उसे नहीं बढ़ने देना मनुष्य की अपनी इच्छा है, अपना आदर्श है। बृहत्तर जीवन में अस्त्र-शस्त्रों का बढ़ने देना मनुष्य की पशुता की निशानी है और उनकी बाढ़ को रोकना मनुष्यत्व का तकाजा है। मनुष्य में जो घृणा है, जो अनायास-बिना सिखाये-आ जाती है, यह पशुत्व का द्योतक है और अपने को संयत रखना, दूसरे के मनोभावों का आदर करना मनुष्य का स्वधर्म है। बच्चे यह जानें तो अच्छा हो कि अभ्यास और तप से प्राप्त वस्तुएँ मनुष्य की महिमा को सूचित करती हैं।

सफलता और चरितार्थता में अन्तर है। मनुष्य मारणास्त्रों के संचयन से, बाह्य उपकरणों के बाहुल्य से उस वस्तु को पा भी सकता है, जिसे उसने बड़े आडम्बर के साथ सफलता का नाम दे रखा है। परन्तु मनुष्य की चरितार्थता प्रेम में है, मैत्री में है, त्याग में है, अपनों को सबके मंगल के लिए नि:शेष भाव से दे देने में है। नाखूनों का बढ़ना मनुष्य की उस अन्ध सहजात वृत्ति का परिणाम है, जो उसके जीवन में सफलता ले आना चाहती है, उसको काट देना उस स्व-निर्धारित, आत्म-बन्धन का फल है, जो उसे चरितार्थता की ओर ले जाती है।

नाखून बढ़ते हैं तो बढ़ें, मनुष्य उन्हें बढ़ने नहीं देगा।

शब्दार्थ-टिप्पणी

अल्पज्ञ कम जानने वाला **नखदंतावलंवी** नाखूनों और दाँतों पर निर्भर **अनुवर्तिता** अनुसरण करने की प्रवृत्ति **अनुसंधित्सा** खोज की इच्छा **उत्स** स्रोत **उद्‌भावित** उत्पादित **द्योतक** सूचक **नि:शेष** संपूर्ण

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) जंगली अवस्था में मनुष्य को नाखून की आवश्यकता क्यों थी?

(2) वज्र किससे बना था?

(3) अब मनुष्य को नाखून की जरूरत क्यों नहीं है?

(4) मनुष्य की पशुता कैसे जीवित है?

(5) अपने मत से मनुष्य किस ओर बढ़ रहा हैं?

(6) हमारी परंपरा कैसी है?

(7) कालिदास ने क्या कहा था?

2. उत्तर लिखिए :

(1) मनुष्य के लिए क्या असह्य है? क्यों?

(2) प्राणि-विज्ञानियों का वृत्तियों के संदर्भ में क्या मत है?

(3) मनुष्य पशु से किन बातों में भिन्न है?